चन्दामामा
मई १९६७
75 P

गेवाबॉक्स की आकर्षक 'बॉडी' बढ़िया इस्पात से बनाई जाती है

इसके टूटने मुड़ने या पिचकने का डर नहीं रहता क्योंकि, गेवाबॉक्स अपनी तरहका एक ही कैमरा है जिसकी पूरी 'बॉडी' बढ़िया इस्पात से बनाई जाती है।

गेवाबॉक्स की अन्य विशेषताएँ भी अतुलनीय हैं —

* बढ़िया चौरस (६ सीएम. x ६ सीएम.) तस्वीरें उतारता है, अपने समकक्ष कैमरों से उतारी गई तस्वीरों से ५०% बड़ी। एन्लार्जमेन्ट भी बढ़िया बनते हैं।
* चमकदार, साफ़ 'आइ-लेवल' व्यूफाइन्डर
* ३ स्पीड (बल्ब, १/५० वीं सेकन्ड स्पीड और १/१००वीं सेकन्ड स्पीड)
* २ एपर्चर (एफ़ ११ और एफ़ १६)

गेवाबॉक्स को चलाना बहुत ही आसान है। आप सिर्फ़ 'क्लिक' कीजिए बाक़ी का काम गेवाबॉक्स खुद कर लेगा।

मूल्य : रु. ४४.००
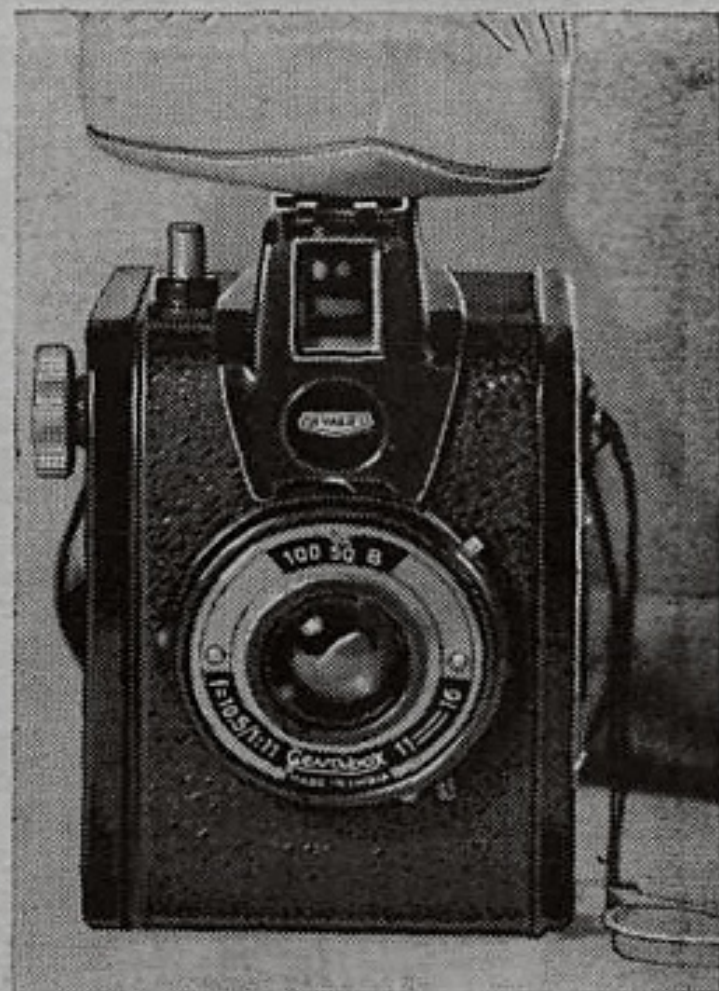
सुदृढ़ !

> **फ़ोटोग्राफ़ी सीखिए, गेवाबॉक्स अपनाइए।** फ़ोटोग्राफ़ी एक ऐसा शौक है जिससे आप किसी भी समय की स्मृतियों के चित्र-संकलन से एक अनोखा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

गेवर्ट

गेवाबॉक्स

गेवर्ट **गेवाबॉक्स** एक लोकप्रिय कैमरा है जो बढ़िया से बढ़िया तस्वीरें उतारता है।

१०० रु. जीतिए : इनाम जीतनेका विवरण 'एग्फ़ा गेवर्ट फ़ोटो गैलरी' नामक पत्रिका में मिलेगा। इस पत्रिका के ६ अंक मुफ़्त प्राप्त करनेके लिए रु. १ डाकख़र्च के लिए इस पते पर भेजिए —

एग्फ़ा - गेवर्ट इंडिया लिमिटेड,
कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी टाटा रोड,
बम्बई १.
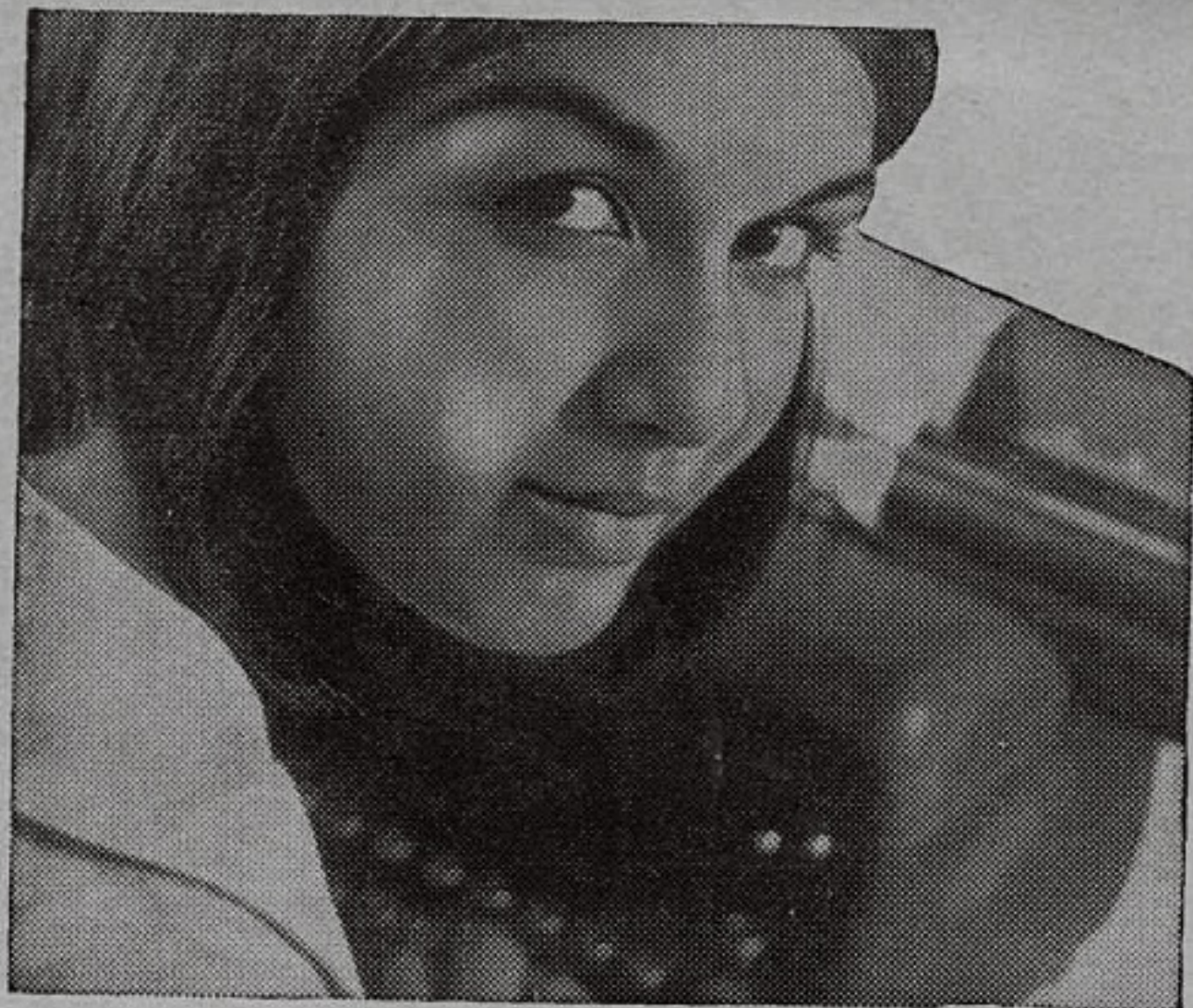
LPE-Alyars DCM 219 (4) HN
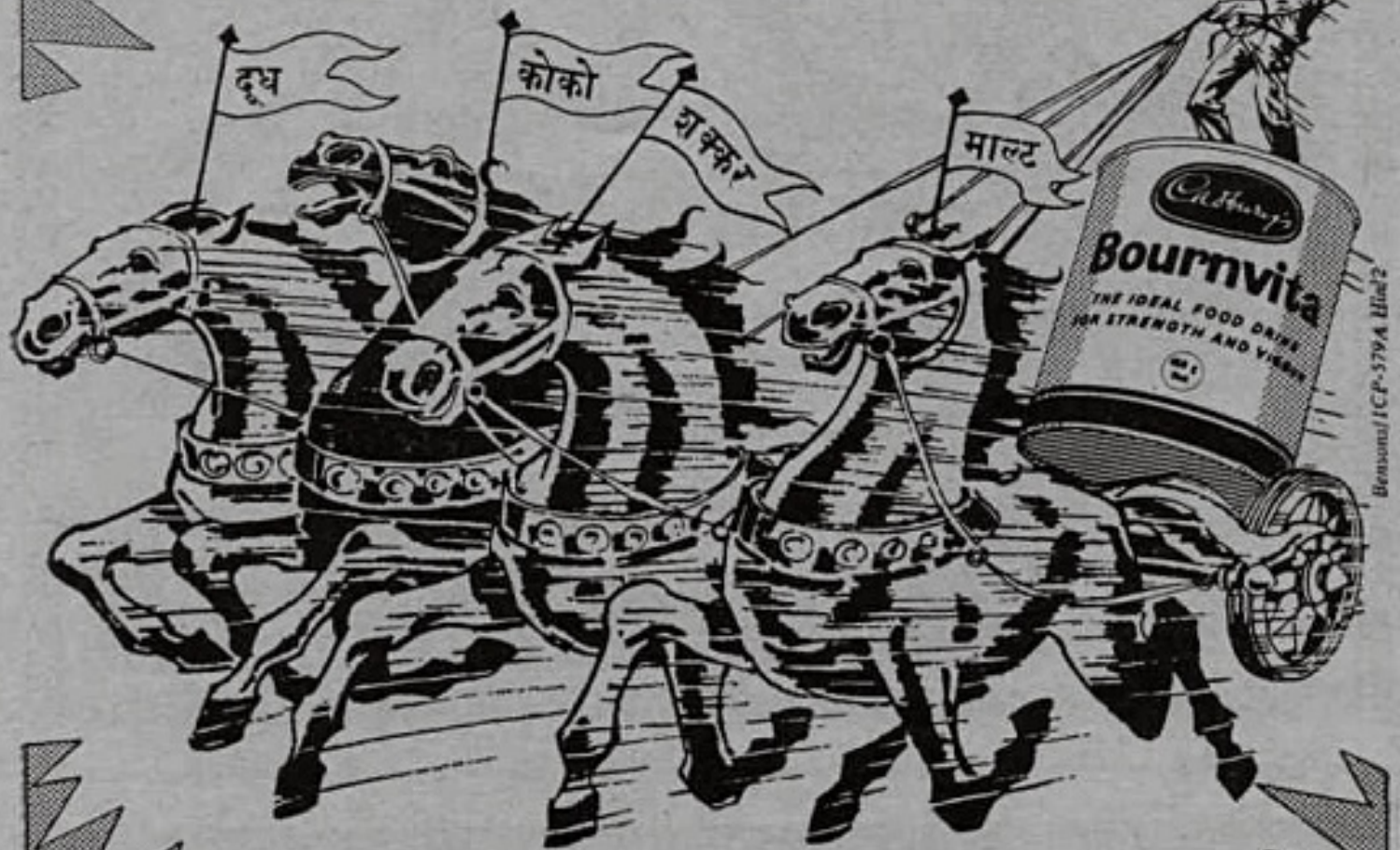
कॅडबरिज़

बोर्नविटा

बोर्नविटा में कई पौष्टिक पदार्थ सम्मिश्रित हैं। इससे मांसपेशियों और स्नायुतन्तुओं के विकास के लिये प्रोटीन मिलता है, शक्ति और उत्साह के लिये कार्बोहाईड्रेट, हड्डियों को मजबूत रखने के लिये खनिजलवण और स्वास्थ्य के लिये आवश्यक विटामिन मिलते हैं। आसानी से बनाया जा सकने वाला बोर्नविटा स्वादिष्ट भी होता है।

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
प्रायः जो चालाक होते हैं, वे अपनों से भी चालाकी करते बाज़ नहीं आते। उनको इस कारण मुँह की खानी पड़ती है...इसका दृष्टान्त इस मास की "पति-पत्नी की सूझबूझ" कहानी है।
सूझबूझ वाला होना अच्छी बात है। पर सूझबूझ से दूसरों का हानि पहुँचाना कभी कभी अपनी ही हानि में परिणमित होता है।
वर्ष: १८ मई १९६७ अंक: ९
CHITRA

भारत का इतिहास

१७वीं सदी के पूर्वार्ध में इन्लिश ईस्ट इन्डिया कम्पनी को कोई खास लाभ नहीं हुआ। परन्तु उत्तरार्ध में उसे ब्रिटिश सरकार से कुछ सुविधायें मिलीं और वह विकसित होने लगी।

इसी समय में उसके "दान्त" आये। वह कम्पनी, जो तब तक, शान्तिपूर्वक व्यापार करती आयी थी, शक्तिशाली बन गई और कुछ प्रान्तों को अपने आधीन करने के लिए तैयारियाँ करने लगी। उनको देश में फैली हुई आराजकता ने इसके लिए प्रेरित किया। जीराल्ड अंगियर ने जिसने १६६९ से बम्बई में गवर्नर का काम किया था, कम्पनी डायरेक्टरों के नाम अपने एक पत्र में लिखा था। "अब से आप लोगों को हाथ में तलवार लेकर अपना व्यापार करना होगा।"

कम्पनी की नीति में परिवर्तन आया। भारत को ब्रिटेन के आधीन लाने के लिए प्रयत्न होने लगे। कम्पनी के प्रमुखों में से एक सर जोन चाइल्ड ने १६८८ दिसम्बर में बम्बई के बन्दरगाह और पश्चिमी तट के कुछ और मुगल बन्दरगाहों को घेर लिया। कई मुगल नौकायें पकड़ी गईं। पर यह जल्दबाजी ही थी। मुगल साम्राज्य उतना कमजोर न था, जितना कि ब्रिटिश लोगों ने सोचा था। सर जोन चाइल्ड को, इसके लिए औरन्गजेब से माफी ही नहीं माँगनी पड़ी बल्कि उसे डेढ़ लाख रुपया हरजाना भी देना पड़ा। १६९० फरवरी में औरन्गजेब ने ब्रिटिशों को व्यापार करने की अनुमति दे दी।

बेन्गाल में भी अंग्रेज व्यापारियों को व्यापार की सुविधायें देते हुए, सुल्तान

६७. ईस्ट इन्डिया कंपनी का विस्तार

शुजा ने १६५१ में एक फरमान जारी किया। परन्तु शुजा के बाद उसके वारिसों ने ये सुविधायें वापिस ले लीं। १६७२ शैस्तखान ने जो फरमान निकाला था अंग्रेज उसका भी फायदा न उठा सके। इसलिए कम्पनी ने जोर जबर्दस्ती से अपना काम चलाने की सोची। उन्होंने हुगली में एक किला बनवाया। १६८६ ऑक्टोबर में अंग्रेजों और मुगलों में युद्ध हुआ। अंग्रेज हुगली से भाग गये। नदी के मुहाने के एक द्वीप में चले गये और वहाँ से उन्होंने समझौते के लिए बातचीत शुरु की। सन्धि तो हो गई। पर अगले साल केप्टेन विलियम हीथ के नेतृत्व में इन्लेन्ड से एक नौकादल आया और उसने चिटगान्ग को वश में लाने के लिए आक्रमण किया। हीथ इसमें असफल रहा। मद्रास पहुँचा।

१६९० में औरन्गजेब से सन्धि कर लेने के बाद अंग्रेज इस तरह की शरारत भरे कार्यों से बाज आये। जाब चारनेक समझदार था। अगस्त १६९० में उसने बेन्गाल में सुतमति नायक स्थान पर एक फेक्टरी बनवाई। १६९१ में मुगल बादशाह के हुक्म पर बेन्गाल के शासक
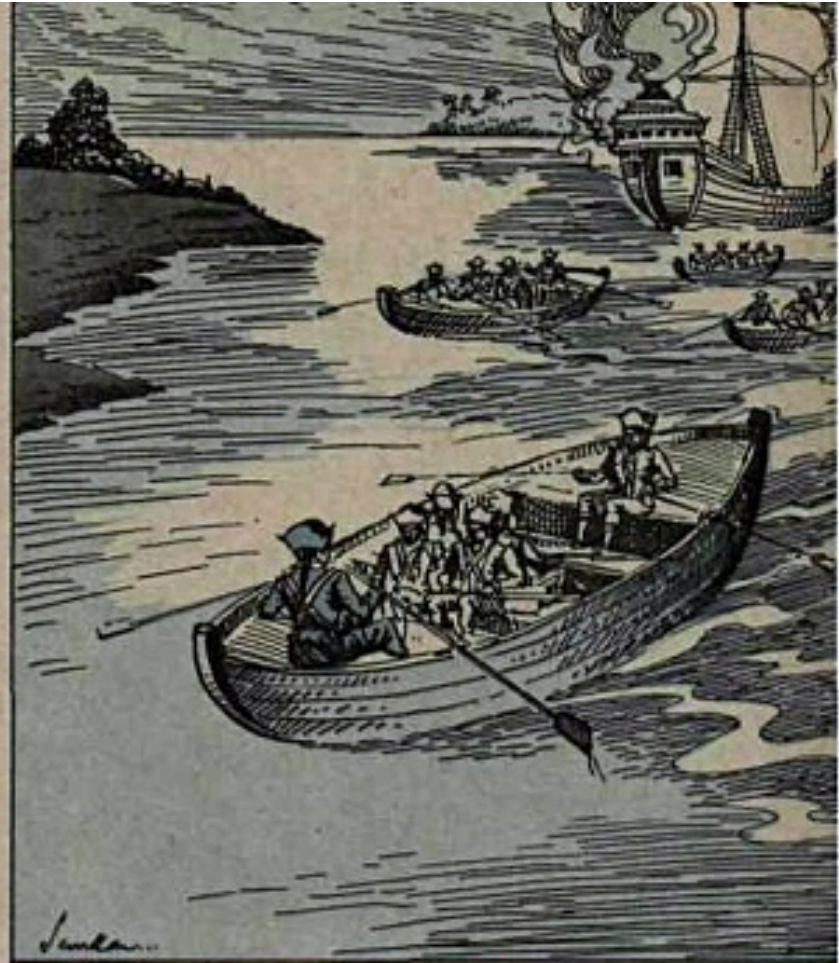
इब्राहीमखान ने एक फरमान जारी किया। उस फरमान के मुताबिक अंग्रेजों का सालाना तीन हजार रुपये के बदले व्यापार की सुविधायें दी गईं।

बरदवान जिला के जमीन्दार (शोभासिंग) के विद्रोह के बहाने १६९६ में अंग्रेजों ने अपने किले के लिए आवश्यक रक्षण की व्यवस्था की। दो साल बाद उन्होंने सुतमति, कलिकाता, गोविन्दपुर नामक तीन गाँवों को १२०० रुपयों में खरीद लिया। बेन्गाल में अंग्रेजों की बस्ती का फोर्ट विलियम नाम रखा गया।

चार्ल्स द्वितीय और जेम्स द्वितीय के समय कम्पनी को बड़ा फायदा हुआ। परन्तु १६९४ में ब्रिटिश पार्लिमेन्ट ने कम्पनी के भारत में व्यापार करने के एकाधिकार को रद्द कर दिया। पार्लियामेन्ट ने हर अंग्रेज को भारत में व्यापार करने का अधिकार दे दिया। १६९८ में यह कानून भी बन गया। जनरस सोसाईटी नाम से एक और संस्था बनी। पुरानी संस्था अपने अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए नई संस्था में शामिल हो गई। परन्तु पुरानी कम्पनी के मुकाबले में "अंग्रेजी व्यापारी कम्पनी" नाम से एक और संस्था बनी। इस कम्पनी की ओर से सर विलियम नोरिस नाम का एक दूत मुगल दरबार में आया और अपनी कम्पनी के लिए विशेष सुविधायें प्राप्त करने की उसने कोशिश की। पर वह कामयाब न हुआ। आखिर ये दोनों कम्पनियाँ एक हो गईं। १७९३ तक व्यापार करती रहीं।

अठ्ठारहवीं सदी के पहिले ४० वर्ष तक इन्गिलश ईस्ट इन्डिया कम्पनी का व्यापार क्रमपूर्वक और शान्तिपूर्वक चलता रहा। देश की अराजकता ने इस व्यापार में कोई विघ्न न डाला। १७१५ से मुगल दरबार में कम्पनी की तरफ़ से एक दूत भी रहने लगा। दूतावास के एक चिकित्सक (विलियम हेमिल्टन) ने बादशाह फरुखसियर की चिकित्सा भी की। इससे कम्पनी का फायदा ही हुआ। कुछ कर जो वे तब तक देते आये थे, रद्द कर दिये गये। बम्बई में जो सिक्के बनाये जा रहे थे वे सारे मुगल साम्राज्य में स्वीकृत किये जाने लगे।

नेहरू की कथा

[३४]

१९३६ के प्रारम्भ में काँग्रेस ने निर्वाचन के लिए तैयारियाँ प्रारम्भ कीं। उसके लिए एक प्रणालिका भी बनाई। जवाहरलाल नेहरू ने भाषण करते हुए देश का दौरा किया।

११ दिसम्बर १९३६ जवाहलराल नेहरू तीसरी बार काँग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। वे लगातार तीन साल काँग्रेस का अध्यक्ष नहीं होना चाहते थे। पर गान्धीजी ने भी उनके निर्वाचन का समर्थन किया।

काँग्रेस के फैजपुर अधिवेषन में जवाहर ने भारतीय स्वतन्त्रता के बारे में भाषण किया। ब्रिटेन के उपनिवेषवाद के तरीकों का उन्होंने खण्डन किया।

निर्वाचन हुआ। सात प्रान्तों में काँग्रेस विजयी हुई। दिल्ली में काँग्रेस विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्यों की एक बैठक हुई और पद स्वीकरण करने का उन्होंने निश्चय किया। जवाहर नेहरू को यह निश्चय पसन्द न था।

काँग्रेस को मुस्लिम वोट अधिक नहीं मिले। जिन्ना का मत था कि मुसलमानों की अलग समस्यायें थीं। जहाँ तक किसानों का सम्बन्ध था, नेहरू ने कहा कि उनकी समस्यायें अलग न थीं। दोनों में कुछ वाद विवाद हुआ।

१९३८ के आरम्भ में बम्बई में कांग्रेस कार्यकारिणी की एक सभा हुई। उसमें काँग्रेस मन्त्रियों के कार्य की समीक्षा की गई। काँग्रेस और सरकार में अनबन होने की सूचनायें मिल रही थीं। सरकार ने राजनैतिक कैदियों की
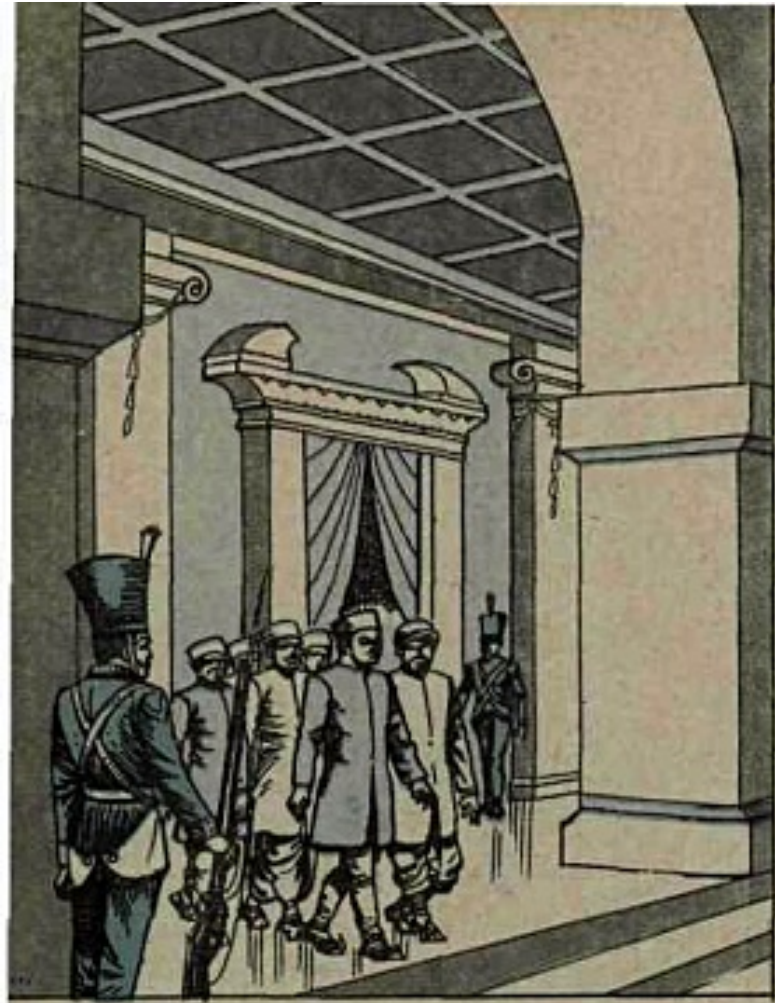
रिहाई के बारे में कुछ आनाकानी दिखाई। फरवरी में बिहार, यू. पी. के मन्त्रिमण्डलों ने इस्तीफा दे दिया।

"इस परिस्थिति के लिए तैयार रहिये।" जवाहरलाल ने राष्ट्रीयवादियों को आगाह किया।

हरिपुरा काँग्रेस के अधिवेषन के अध्यक्ष सुभासचन्द्रबोस निर्वाचित हुए।

स्पेन में प्रजातन्त्र की हत्या की जा रही थी, जुलाई में जवाहर वहाँ स्वयं गये। उन्होंने वहाँ फासिस्टों का हत्याकाण्ड और नाजियों के विध्वंसकारी कार्य देखे और उनके विरुद्ध जनता का शौर्यपूर्ण युद्ध भी देखा। वहाँ अकाल भी था। अपने देश वापिस आकर, उन्होंने स्पेन वासियों के लिए एक जहाज भरकर खाद्यपदार्थ भिजवाये।

जब ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री श्री चेम्बरलेन ने जर्मनी को खुश करने के लिए जेकोस्लेविया को बलि देने के निश्चय की सूचना जिनेवा में दी थी, तब जवाहर वहीं थे। "संसार पर आपत्ति आनेवाली है। इधर उधर की बातों से यह समस्या हल होनेवाली नहीं है। संसार की उन्नतिशील शक्तियों को संगठित होना होगा और इस संगठन में भारत भी कुछ कर सकता है। पर पहिले उसे स्वतन्त्र होना होगा।" उन्होंने कहा।

१९३९ के आरम्भ में देशी रियासतों में कुछ आन्दोलन शुरु हुए। वहाँ सामन्ती अन्याय के कारण जनता को बड़े कष्ट उठाने पड़ रहे थे। आखिर सहने की भी सीमा आ गई। जो आन्दोलन जयपुर में शुरु हुआ, वह राजकोट पहुँचा और रियासतों में लोग अपने अपने राजाओं के विरुद्ध आन्दोलन करने लगे।

लुधियाना में रियासतों की जनता की एक सभा हुई। उसके जवाहरलाल नेहरू अध्यक्ष थे।

"यह एक अस्वस्थ व्यवस्था है। यह हमारे देश में कभी की खतम हो चुकी थी। परन्तु अंग्रेज शासकों ने उसको अपने स्वार्थ के लिए कायम रखा और उसको नया जीवन दिया।" जवाहर ने रियासतों के बारे में कहा।

सितम्बर में १९३९ में दूसरा युद्ध प्रारम्भ हुआ। युद्ध के आने के छः महीने पहिले ही उन्होंने कहा—"ब्रिटेन, फ्रान्स, रूस, अमेरिका यदि एक हो गये, तो वे अपराजेय हैं। पर ब्रिटेन और फ्रान्स, रूस से हाथ नहीं मिलायेंगे। यह करने से, उनको डर है कि भारत में नये विचार और आदर्श आयेंगे।"

युद्ध प्रारम्भ होने के बाद कॉंग्रेस ने ब्रिटेन और फ्रान्स से पूछा—"तुम्हारे युद्ध के क्या उद्देश्य हैं? अगर साम्राज्यवाद को सुरक्षित रखना ही इस युद्ध का उद्देश्य हो, तो भारत का ऐसे युद्ध से कोई सम्बन्ध नहीं है। यदि यह प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए है, तो भारत

भी उसमें सहभागी होगा।" कॉंग्रेस ने यह स्पष्टतः घोषित किया। परन्तु भारत को युद्ध में जबर्दस्ती घसीटा गया। चूँकि ब्रिटेन ने अपने युद्ध के उद्देश्य घोषित न किये थे। इसलिए कॉंग्रेस मन्त्रियों ने अपने पदों से इस्तीफा दे दिया। व्यक्तिगत सत्याग्रह प्रारम्भ हो गया।

जापान, जब भारत की सीमाओं पर आ गया था, तब स्टाफर्ड क्रिप्स भारत से समझौता करने आये। पर वह इस कार्य में सफल न हुये। कॉंग्रेस के प्रतिनिधियों के तौर पर जवाहरलाल नेहरू

और आजाद उनसे मिले। ब्रिटेन, भारत को अपने अधिकार से मुक्त नहीं करना चाहता था।

"भारत देश अपने ही बल से अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा।" कॉंग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया।

१९४२ अगस्त में बम्बई में कॉंग्रेस का एक अधिवेषन हुआ। "भारत छोड़ो" प्रस्ताव वहाँ पास हुआ। "भारत छोड़ो" यह भारत स्वतन्त्रता का मन्त्र-सा हो गया। राष्ट्रीय आन्दोलन के इतने दिनों के बाद गान्धीजी ही, ऐसा लगता था, जैसे क्रान्तिकारी हो गये हों।

कॉंग्रेस के यह आन्दोलन प्रारम्भ करने से पहिले ही, अगले दिन सवेरे सरकार ने कॉंग्रेस के नेताओं को एक साथ गिरफ्तार किया।

कुल मिलाकर ३० गिरफ्तार हुए थे। सब कॉंग्रेस के अधिवेषन में शामिल होनेवाले नेता थे। गान्धीजी को चिंचवाड़ी के पास उतारा गया। उन्हें आगाखान के महल में कैदी रखा गया। बम्बई के नेताओं को यरवदा जेल ले जाया गया। बाकी कार्यकारिणी के सदस्यों को पूना ले जाकर वहाँ से अहमदनगर के किले में ले जाया गया।

यह पता लगते ही कि नेता गिरफ्तार कर लिए गये हैं, देश में रोष और क्रोध का ज्वालामुखी फूट पड़ा। बिना नेताओं के मार्गदर्शन के उन्होंने सरकार का सामना किया। नाना यातनायें सहीं। ईंट का जवाब पत्थर से देने की कोशिश की। १८५७ के बाद देश में यह पहिला इस प्रकार का आन्दोलन था।

पाताल दुर्ग

[१२]

[धूमक और मित्र कहाँ छुपे हुए थे यह मगर मनुष्यों ने देख लिया। इससे पहिले कि वे उनके पास आ सके धूमक आदि पेड़ों पर से उतरकर, पहाड़ के मोड़ की ओर भागने लगे। शत्रु उनका पीछा करने लगे। उनमें से एक जत्थे ने भाले लेकर चिल्ला चिल्लाकर उनका रास्ता रोका। बाद में—]

धूमक बिल्कुल न डरा। उसने एक बार पीछे मुड़कर देखा। जो मरने से बच गये थे, वे मगर-मनुष्य पगडंडी से उनके पीछे भागते आ रहे थे।

"सोमू, ये जो भागे आ रहे हैं, इनकी खबर मैं लूँगा। तुम और विरूप उन पर भाले और बाण फेंको, जो हल्ला कर रहे हैं।" यूँ कहकर धूमक ने एक भाला लेकर मगर मनुष्यों पर खूब जोर से फेंका।

भाले को आते देख, वे चिल्लाये और पगडंडी से हटकर दोनों ओर भाग उठे। इस बीच सोमक और विरूप के छोड़े हुए भाले और बाण पहाड़ के मोड़ के पास के नाव के मगर मनुष्य पर गिरे।

"अरे कितनी हिम्मत....।" मगर मनुष्यों में से एक जोर से चिल्लाया। वह बड़ा हट्टा कट्टा था। उस गुट का सरदार था।

"मारो....काटो आगे बढ़ो, कोई डर नहीं है, मैं यहीं हूँ।" वह चिल्लाया।

जब कुछ मगर मनुष्य भाले लेकर धूमक की ओर कूदने को हुए, तो पहाड़ के मोड़ से कुछ भील चिल्लाते चिल्लाते उन पर धावा बोलने लगे।
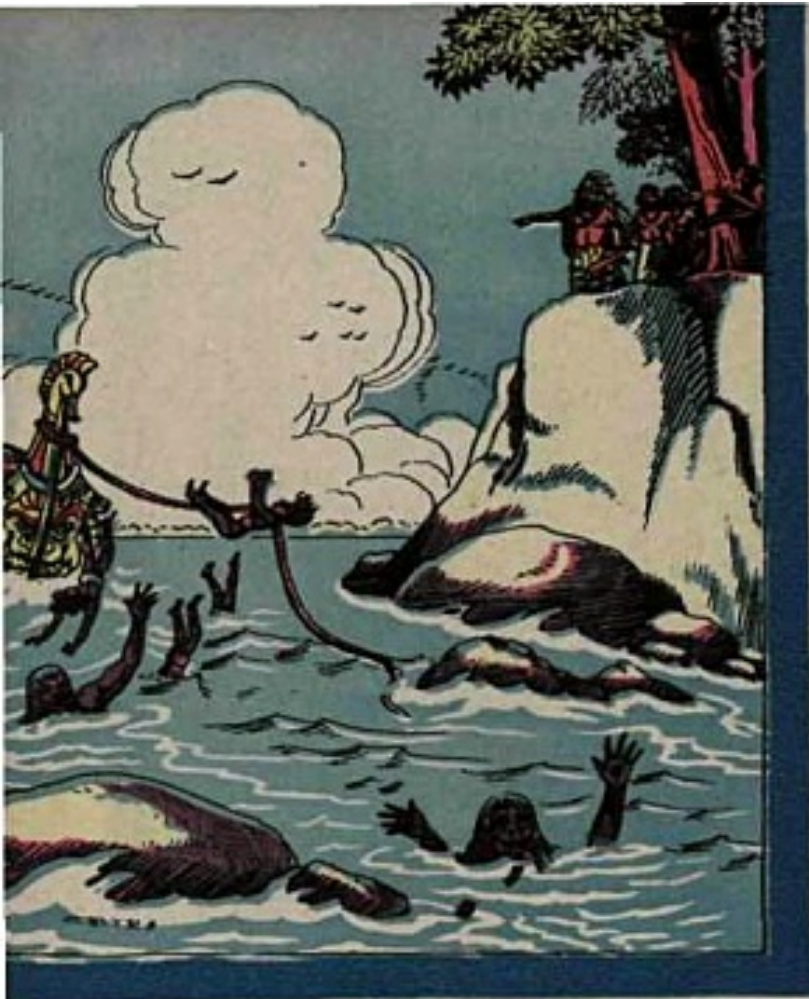
"धोखा .... अरे .... आफत .... आफत राक्षसेन्द्र की जय सब नाव की ओर चलो, रास्ता दिखाने के लिए मुझे आगे जाने दो।" कहता मगर मनुष्यों का सरदार पेड़ से बंधी रस्सी से लटककर नाव की ओर जाने लगा।

उसके साथी भी उसके पीछे बन्दरों की तरह रस्सी से लटककर नाव की ओर जाने लगे।

"इस रस्सी को काट दो, इन दुष्टों को पानी में मार देना ही अच्छी सजा है।" यूँ चिल्लानेवाला भीलों का सरदार पुलिन्द था।

तुरत भीलों में से एक आगे लपका। पेड़ के तने से बंधी रस्सी को उसने काट दिया। मगर मनुष्य हाय हाय करते पानी में गिर पड़े।

रस्सी के कटते ही, बहाव में नाव भी एक तरफ आ लगी। नाव में से किसी स्त्री की आवाज सुनाई दी। "मेरी रक्षा करो।"

यह हाहाकार सुनकर पुलिन्द ने कहा—"वह चिल्लानेवाली मेरी छोटी स्त्री है। नाव डूब गई, तो मर जायेगी। जैसे भी हो, नाव को पकड़ना होगा। तुम जाकर दो चार तमेड़ें

ले आओ।" उसने अपने साथियों को आवाज दी।

इतने में धूमक और उसके मित्र नदी के किनारे आये। उनको देखकर पुलिन्द की खुशी का ठिकाना न था।

वह भागा भागा आगे गया और धूमक को गले लगाकर उसने कहा—"धूमक बाबू! मेरी छोटी स्त्री इस नाव में ही कैद है। चिल्ला रही है, बचाओ बचाओ। हम कैसे नाव को पकड़ें।"

धूमक ने नाव की ओर देखा, मगर मनुष्यों में से कुछ चिल्लाते, डूबते, तैरते नाव के आगे बहते जाते थे। कई हाँफते हाँफते नाव की ओर तैरते जा रहे थे।

"पुलिन्द तुम्हें नाव की रस्सी नहीं काटनी चाहिए थी। उसी रस्सी से हम नाव को किनारे खींच सकते थे। राक्षस के सेवक नदी के बहाव में डूबकर अवश्य मरेंगे और जो तैरते नाव की ओर जा रहे हैं, वे नाव तक पहुँचेंगे, इसका भी मुझे विश्वास नहीं है। फिर भी नाव में क्यों नहीं एक भी रहा, सब के सब क्यों किनारे पर चले आये?" धूमक कह

रहा था कि नाव के अन्दर के कमरे में से एक बौना-सा राक्षस लंगड़ाता लंगड़ाता पतवार के पास गया। उसके पतवार के घुमाते ही नाव का इधर उधर डुलना खतम हो गया और वह तेजी से तैरने लगी।

बौने राक्षस ने दान्त पीसकर, एक बार धूमक की ओर देखा। फिर चप्पू लेकर, नाव की ओर तैरते हुए मगर मनुष्यों में से एक के सिर पर जोर से मारा। "जाओ....गधो जाओ....तुम्हें और कालकलि को एक लम्बी नमस्ते।

तो जरूर उसके हाथ मारे जाओगे। अपनी तमेड़ों को आने दो। नाव का पीछा करो। उस राक्षस को मारकर हम तुम्हारी पत्नी की रक्षा करेंगे।"

बौना राक्षस एक बार जोर से यूँ हँसा, जैसे कोई गधा रेंक रहा हो। "एक दूसरे को प्यार करके विवाह कर लेना उठा ले जाना कैसे हो सकता है?" कहते हुए चप्पू से उसने नाव के पास आते एक और मगर मनुष्य को जोर से मारा और नाव को धारा की ओर ले जाने लगा।

नाव मेरी है और नाव के अन्दर की स्त्री मेरी है। हम दोनों इस घने जंगल में कहीं एक झोंपड़ी बना लेंगे और आराम से बिना किसी के दखल के रहेंगे।"

यह सुनकर पुलिन्द आगबबूला हो उठा। "अरे दुष्ट कहीं के, पति के जीते जी मेरी पत्नी को रख लेना चाहते हो।" नदी में कूदकर वह नाव की ओर तैरने लगा।

परन्तु विरूप ने उसे पकड़कर बाहर खींचा। "जल्दबाजी न करो, अब अगर तुम अकेले उस राक्षस के पास गये,

"अरे....गई....मेरी छोटी पत्नी हाथ से छूट गई...." चिल्लाता पुलिन्द फिर पानी में कूदने को था कि विरूप ने उसको कमर पकड़कर पीछे की ओर खींचा।

इस बीच सोमक ने, बाण लेकर राक्षस के घुटने पर निशाना लगाया। बाण के लगते ही रावण ने पतवार छोड़ दी, घुटने पकड़कर नाव में गिर गया।

"यह है चोट! वह मरेगा नहीं और नाव को भी तेजी से न चला सकेगा। वाह...." धूमक ने कहा।

नाव एक भँवर में फँसकर चकर काटने लगी। बौना राक्षस उठा। घुटने पर लगे बाण को निकालकर उसने दूर फेंक दिया।

लंगड़ाता लंगड़ाता फिर पतवार पकड़कर नाव को धारा की ओर ले जाने लगा।

इतने में भीलों की दोनों तमेडें उस तरफ आयीं। इन्हीं तमेडों पर कुछ देर पहिले धूमक ओर उसके साथी नदी पार करके आये थे। उनमें से एक पर काला गरुड़ पक्षी भी था।

तमेड़ों के किनारे पर आते ही धूमक और विरूप एक पर जा कूदे। सोमक और पुलिन्द एक और पर जा चढ़े। पुलिन्द ने किनारे पर के अपने भील साथियों से राक्षस की नाव की ओर इस तरह पत्थर फेंकने के लिए कहा कि पत्थर उस पर तो न लगे, पर उसका बहना रोक दें। "नाव चोट खाकर अगर नदी में डूब गई, तो तुम्हारी चमड़ी उखड़वा दूँगा।" पुलिन्द ने उनको खबरदार किया।

जोर से चप्पू लगाकर धूमक ने तमेड़ को नाव के पास ले जाने के लिए कहा।

"नाव डूबने ही दो, कोई बात नहीं है, यह काफी है। यदि हम उस राक्षस को जीते जी पकड़ लें। उससे हम कालकलि के पातालदुर्ग का रास्ता ठीक तरह जान सकेंगे।"

"यदि नाव डूब गई, तो मेरी छोटी पत्नी का क्या होगा?" पुलिन्द ने काँपती हुई आवाज में पूछा।

"धूमक बाबू....मुझे लग रहा है कि नाव में कालशम्बर मान्त्रिक भी कैद है। हमें नाव को भी, जैसे भी हो पकड़ना होगा। इस बौने राक्षस को हम चारों के

लिए पकड़ना कौन-सी बड़ी बात है!" विरूप ने कहा।

नाव तेजी से बहती जाती थी। राक्षस भी पतवार लेकर नाव को इस तरह चुस्ती से चला रहा था, जैसे वह इन लोगों की चाल जानता हो। पर इतने में पुलिन्द के साथी नदी के किनारे के पत्थरों के ढ़ेर पर से बड़े बड़े पत्थर नाव की ओर फेंकने लगे। वे पत्थर नाव के आगे पीछे गिरते और पानी में जोर की लहरें पैदा कर देते। राक्षस को डर लगा कि वे नाव को डुबाने का प्रयत्न कर रहे थे।

धीमे धीमे नाव और तमेड़ों के बीच का फासला कम होने लगा। पुलिन्द के साथी नाव के पास बड़े बड़े पत्थर फेंकते जाते थे। धूमक और उसके साथी सोच रहे थे कि अब जल्दी ही, नाव पकड़ ली जायेगी।

विरूप बड़े जोश में काले गरुड़ पक्षी के पास आकर चुटकियाँ बजा रहा था। उसने दूर भागने का प्रयत्न न किया, सिर नीचा करके वह सीटी-सी बजाने लगा।

"यदि इस गरुड़ को वश में कर लिया गया, तो इसे उड़ाकर राक्षस के सिर और कन्धों पर चोट कराई जा सकती है।" विरूप ने कहा।

इतनों में भीलों का फेंका पत्थर निशाना चूककर विरूप की नाव पर आ लगा। उस चोट से तमेड़ उलट गई। विरूप धूमक और दो भील पानी में गिरे और तमेड़ के सीधे होते ही, फिर उस पर जा चढ़े। गरुड़ भी पानी में गिरा और पंख फड़फड़ाता विरूप के कन्धों पर मंडराया। विरूप यह देख बड़ा खुश हुआ।
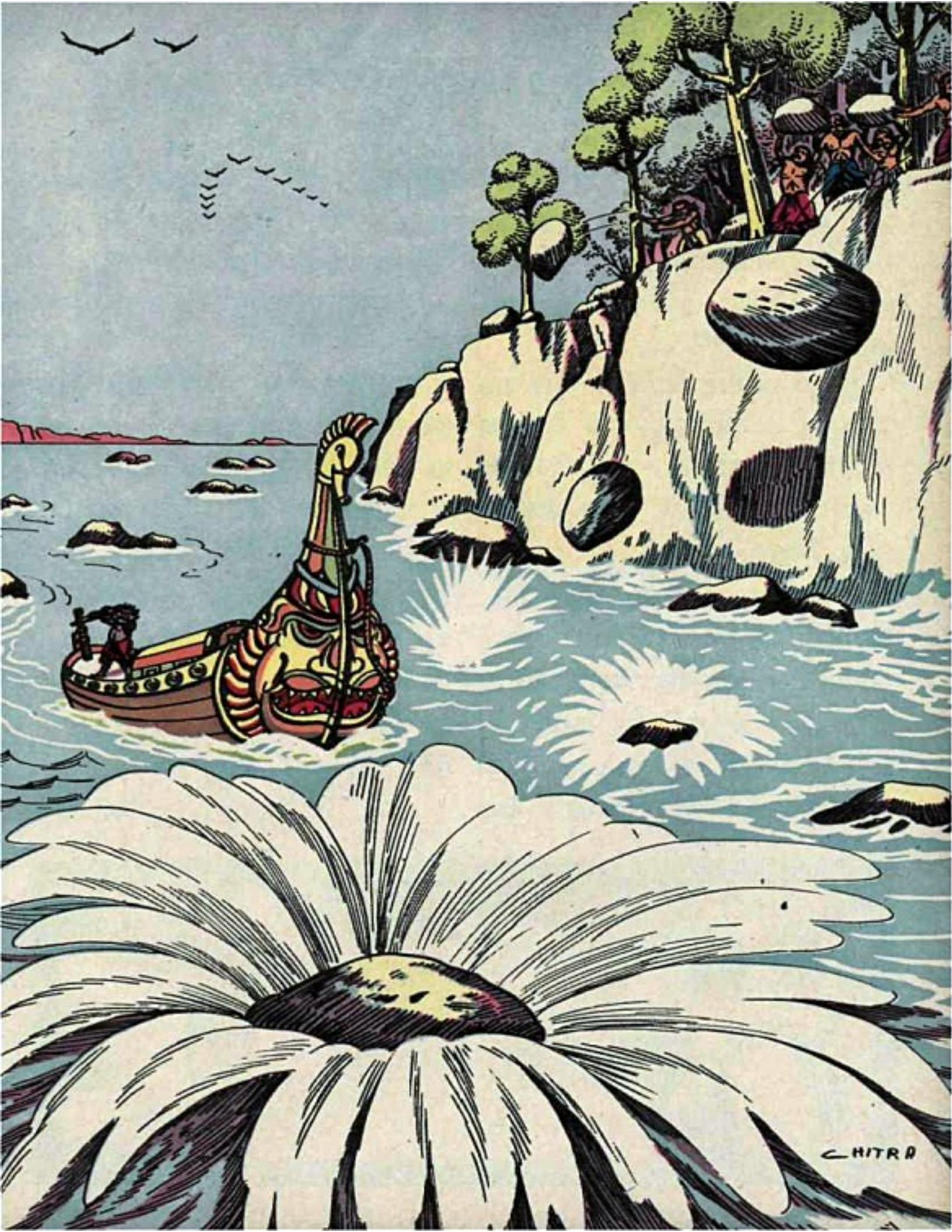
CHITRA

यकायक पानी का बहाव तेज हुआ। यही नहीं नदी में कहीं कहीं बड़े बड़े पत्थर भी दिखाई दिये। बौना राक्षस उन पत्थरों से बचाकर नाव चला रहा था। पुलिन्द के लोग तब भी पत्थर फेंकते जाते थे।

"मुझे लगता है कि कोई प्रपात पास आ रहा है। इसलिए ही पानी के बहाव में तेजी आ गई है। हम तमेड़ों को किनारे पर ले जायें, तो अच्छा होगा।" विरूप ने कहा।

"तब इस राक्षस का क्या करोगे? मेरी छोटी पत्नी का क्या होगा?" पुलिन्द घबराया। वह इस बीच कहीं किनारे पर लगेगा, नहीं तो वह अभी कह ही रहा था कि नाव नदी के एक पत्थर से जा लगी और टुकड़े टुकड़े हो गई। बौना राक्षस नदी में कूदा। नदी में डूबती तैरती एक स्त्री के पास गया, उसे कन्धे पर डाल तैरता तैरता किनारे की ओर आने लगा।

"तमेड़ों को जल्दी चलाओ।" धूमक ने आज्ञा दी। भीलों ने एक दो मिनटों में उन्हें किनारे पर लगा दिया। परन्तु तब तक बौना राक्षस बहुत नीचे बह गया था और किनारे पर जा लगा था। धूमक जहाँ था और राक्षस जहाँ था उनके बीच में एक देवालय था। उसके प्राँगण के बड़े बड़े वृक्षों पर बड़े बड़े वनमानस और भालू टहनियाँ पकड़कर लटक रहे थे। उनमें से एक वनमानस जोर से चिल्लाया और धूमक की ओर आने लगा।

(अभी है)

अपराध-दण्ड

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल, हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, जब कोई अपनी शक्ति से परे का काम करना चाहे, तो उसे कनकवर्ष की तरह असाधारण शक्तियाँ पाकर, अपना उद्देश्य पूरा करना चाहिए। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं कनकवर्ष की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

गंगा नदी के किनारे, कनकपुर नामके नगर में प्रियदर्शन नाम का राजा रहा करता था, वह नाग राजा वासुकी का लड़का था। उसकी पत्नी यशोधरा नाम की मानव स्त्री थी। कनकवर्ष उनका लड़का

वेताल कथाएँ

था। वह बड़ा सुन्दर था। कोई ऐसी स्त्री न थी, जो उस पर न मुग्ध हुई हो।

उसे बिना देखे ही, मदनसुन्दरी उस पर मुग्ध हो गई थी। वह विदर्भ देश के कुन्डिन नगर के राजा की लड़की थी। कनकवर्ष की तरह वह भी बहुत सुन्दर थी। उसने रोलदेव नाम के बड़े चित्रकार को मनाकर उसके द्वारा, कनकवर्ष को अपनी इच्छा जताने के लिए अपना चित्र कनकपुर भेजा। रोलदेव ने मदनसुन्दरी का चित्र ले जाकर कनकवर्ष को दिखाया। वह उस पर मुग्ध हो गया।

शीघ्र ही कनकवर्ष और मदनसुन्दरी का विवाह हुआ। कुछ समय बीत गया। कनकवर्ष को यह चिन्ता होने लगी कि उसके कोई सन्तान न थी। जब कभी कनकवर्ष को यह पता लगता कि रामायण में दशरथ को भी यही चिन्ता थी, तो वह और चिन्तित हो उठता। वह इसी चिन्ता में, अपने कमरे में करवटें बदल रहा था कि एक अपरिचित स्त्री आयी। उसे देखते ही कनकवर्ष में उसके प्रति गौरव और भक्ति उपजी। उसने उसको नमस्कार किया।

उस स्त्री ने उसे आशीर्वाद देकर, कहा—"मैं तुम्हारी बुआ हूँ। मैं तुम्हारे पिता की बड़ी बहिन हूँ। वासुकी की लड़की हूँ। मेरा नाम रत्नप्रभा है। मैं हमेशा अदृश्य रहकर, तुम्हारी रक्षा करती आयी हूँ। तुम्हें दुःखी देख, मैं अभी प्रत्यक्ष हुई हूँ। क्या दुःख है तुम्हें?"

"मैं धन्य हूँ। मेरा यही दुःख है कि मेरे कोई लड़का नहीं है।"

"मैं उसके लिए एक उपाय बताता हूँ। वह करो। तुम कुमारस्वामी की आराधना करो। उनको प्रसन्न करो।

उनके अनुग्रह से पुत्र प्राप्ति होगी। तुम्हारे मार्ग में बहुत-से विघ्न आयेंगे। पर डरो मत। उनका मुकाबला करने की शक्ति मैं दूँगी।" यह कहकर रत्नप्रभा अदृश्य हो गई।

कनकवर्ष अगले दिन प्रातः अपना राज्य मन्त्रियों को सौंपकर, कुमारस्वामी की आराधना करने निकल गया। उसके चरणों में वह कठिन तपस्या करने लगा। कुछ समय बाद, उस पर तेज़ धारा गिरने लगी। उसको सहने शक्ति रत्नप्रभा ने उसको दी। कुमारस्वामी ने विघ्नेश्वर को, उसकी तपस्या में, विघ्न पहुँचाने के लिए उकसाया। राजा के सिर पर जो धारा पड़ रही थी, उसमें उसने साँप का विष मिला दिया। रत्नप्रभा ने उसको सहने की भी उसे शक्ति दी। यह देख, विनायक प्रत्यक्ष हो अपने दान्तों से उसकी छाती पर प्रहार करने लगा। कनकवर्ष ने अपने सामने प्रत्यक्ष विनायक को स्तोत्र करके सन्तुष्ट किया। विनायक के आशीर्वाद देकर जाने के बाद, कुमार स्वामी प्रत्यक्ष हुआ। "मैं, तुम्हारे धैर्य की प्रशंसा करता हूँ....तुम जो चाहो, माँग लो।...."

"भगवान, मुझ पर कृपा करके मुझे एक पुत्र दो...." कनकवर्ष ने कहा।

"तथास्तु, तुम्हारे एक लड़का होगा। उसका नाम हिरण्यवर्ष रखना। एक बार अन्दर मन्दिर में आओ।" कुमारस्वामी ने कहा। वह उस पर और भी अनुग्रह करना चाहता था।

अगर वह राजा के शरीर में रहकर, कुमारस्वामी के पास गई, तो कुमारस्वामी क्रुद्ध हो सकता था, तो भी वह असलियत जान गया और उसने गुस्से में कहा—"तुमने मुझे धोखा दिया है, इसलिए तुम्हें

अपने लड़के और पत्नी से एक वर्ष तक अलग रहना पड़ेगा।" यह कहकर वह अदृश्य हो गया।

कनकवर्ष अपने नगर वापिस चला गया। कालक्रम से, मदनसुन्दरी के एक लड़का हुआ। उसने अपने लड़के का नाम हिरण्यवर्ष तो रखा। सचमुच उसने अपनी प्रजा पर सुवर्ण वर्षा की।

प्रसवगृह की छठे दिन सब तरह से रक्षा की गई। इतने में घने बादल छा गये और मूसलाधार वर्षा होने लगी। तुफ़ान आ गया। पेड़ गिरने लगे। उस समय प्रसवगृह के किवाड़ खोलकर एक भयंकर आकृतिवाली स्त्री अन्दर गई। बच्चे को उठाकर, सबको चकमा देकर, वह चली गई। "अरे, मेरा लड़का...." कहती उस लड़के की माता, अन्धेरे में उसके पीछे चल पड़ी। वह राक्षसी जाकर, एक झील में कूदी। पुत्र मोह में रानी भी उसमें जा कूदी।

तुरत बादल छट गये। हवा और वर्षा रुक गई। अगले दिन जब कनकवर्ष, पत्नी और लड़के को देखने गया, तो वहाँ उन्हें न पाकर, मूर्छित हो गया। तब से पत्नी के वियोग में, वह पागल-सा होकर, इधर उधर भटकने लगा। उसे कोई सान्त्वना न दे सका। वह अपना नगर छोड़कर, जंगल की ओर निकल गया।

उसने बड़े कष्ट झेले। सौभाग्य से कई विपत्तियों में फंसकर निकल गया। वह विन्ध्या पर्वत के प्रान्तों में बड़ा घूमा घिरा। एक साल हो गया। रत्नप्रभा सहसा उसके सामने प्रत्यक्ष हुई और उसने कहा—"ये लो तुम्हारी पत्नी और लड़का। मैं ही इनको कुमारस्वामी के शाप को पूरा करने के लिए ले गई थी।"

कनकवर्ष बड़ा खुश हुआ। वह अपने लड़के और पत्नी को लेकर अपने नगर गया और सुख से रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। कुमारस्वामी ने जब शाप दिया था तो उसे पुत्र वियोग का ही शाप ने देकर पत्नी वियोग का भी क्यों शाप दिया? पुत्र प्राप्ति के लिए ही तो राजा ने धोखा दिया था? इन प्रश्नों का अगर तुमनें जान बूझकर उत्तर न दिया तो, तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगें।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"देवता अयोग्यों को वर नहीं देना चाहते। राजा की योग्यता जानने के लिए ही कुमारस्वामी ने विघ्नेश्वर से उसकी परीक्षा लेने के लिए कहा था। यह देखकर कि राजा उन परीक्षाओं में, अपनी शक्ति के कारण सफल न हुआ था तो उसे शाप देकर, उसने उसको और परीक्षा दी। सच कहा जाये, तो वह शाप न था। पर दण्ड था। पैदा होते ही लड़के को दूर कर दिया गया तो राजा के लिए वह कोई बड़ा दण्ड न था। राजा की वह हालत रानी के कारण हुई थी। उसका वियोग ही उस के लिए वास्तविक दण्ड था। उसे दण्ड जानकर, ही रत्नप्रभा ने वह काम स्वयं किया। क्यों कि कुमारस्वामी के क्रोध का कारण भी वही थी इसलिए उसी के द्वारा दण्ड दिया जाना उचित ही था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

मन्दमति

एक नदी के किनारेवाले गाँव में रामन्ना नाम का ज़मीन्दार रहा करता था। वह बड़ा भद्र पुरुष था। गाँववाले उसका आदर करते थे। उसको एक ही एक कमी थी। उसकी कोई सन्तान न थी। कुछ दिन बाद यह कमी भी जाती रही। उसके एक लड़का हुआ। उस लड़के का नाम उन्होंने वीरन्ना रखा। माँ बाप उसको बड़े लाड़ प्यार से पालने पोसने लगे।

लाड़ प्यार से वीरन्ना बिगड़ गया। वह बचपन में ही अवारा हो गया। वह गाँव के कम उम्र के लोंगों पर धाक जमाने लगा और अगर कोई उसकी बात न मानता, तो वह उसे पिटवाता। चूँकि वे रामन्ना का आदर करते थे इसलिए उसके लड़के की बुरी हरकतों के बारे में गाँववाले उससे कुछ न कहते थे। औरतें वीरन्ना की माँ के पास जाकर कहा करतीं—"तुम्हारा लड़का मेरे लड़के को बहुत तंग कर रहा है।"

"बच्चे हैं, कभी लड़ते हैं तो कभी मिलते हैं। कहीं इन बातों की शिकायत की जाती है?" वीरन्ना की माँ कहा करती।

वीरन्ना को स्कूल में दाखिल किया गया। पर उसे पढ़ना लिखना न आया। उसकी आवारागिर्दी और भी बढ़ गई सिवाय आवारागिर्दी के उसे कोई और काम न था, वह छोटा मोटा साँड़ सा हो गया था। गाँववाले उससे डरा करते। जब वह नदी के किनारे दूरी पर दिखाई देता, तो स्त्रियाँ पानी ले जाना छोड़ देतीं और वापिस चली जातीं।

ए. लक्ष्मी देवी

रामन्ना को जब, वीरन्ना की हरकतों के बारे में मालूम हुआ तो उसकी चिन्ता भी बढ़ने लगी। जो बचपन में नहीं बदलता, वह बड़ा होकर भी नहीं बदल सकता। वह बीस साल का हो गया था। उसे सुधारना कोई मामूली बात न थी। जब इकलौता उसकी मर्यादा ही नष्ट कर रहा था रामन्ना के लिए सिवाय दुखी होने के कोई रास्ता न था। रामन्ना की पत्नी भी स्त्रियों में शर्मिन्दा थी।

फिर भी जो काम माँ बाप न कर सके, उस गाँव की एक गरीब किसान की लड़की ने कर दिखाया। उस लड़की का नाम गौरी था। वह जितनी सुन्दर थी, उतनी ही समझदार और बातों में चतुर थी। वह वीरन्ना को देखकर कभी न घबरायी थी। उसके सौंदर्य और धैर्य को देखकर, वीरन्ना ने उससे विवाह करने की ठानी। यह बात गौरी ने आसानी से जान भी ली। उसने सोचा कि जिस दिन वह उससे शादी करने के लिए कहेगा उस दिन उसे अच्छा सबक सिखायेगी।

गौरी की सहेलियाँ जानती थीं कि वीरन्ना उसको चाहता था। गरमियाँ शुरु हो रही थीं। जब एक दिन वीरन्ना गौरी के घर के सामने से गुजर रहा था तब वह अपनी सहेलियों से बात कर रही थी।

गौरी की एक सहेली ने इतनी जोर से कहा, ताकि वीरन्ना सुन सके—"तो गौरी तुम्हारी शादी कब है?"

"क्या मेरी शादी इतनी आसानी से होगी? जो मुझ से शादी करना चाहेगा। उसे मेरी दी हुई परीक्षाओं में पास होना होगा।" गौरी ने कहा।

ये बातें सुनकर वीरन्ना झुंझलाया। चूँकि वह गौरी से विवाह करना चाहता

था, इसलिए उसने सोचा कि ये बातें उससे ही कही गई थीं। न मालूम गौरी क्या क्या सवाल करे। वह इसी चिन्ता में उलझ गया। इसलिए कुछ देर बाद, फिर वह गौरी के घर की ओर आया।

"क्यों वीरन्ना इधर क्यों आये हो? मेरे पिताजी घर में नहीं हैं।" गौरी ने कहा।

"मैं तुम्हें देखने आया हूँ। सुन रहा हूँ कि जो कोई तुमसे शादी करना चाहेगा तुम उसकी परीक्षा लोगे। क्या हैं वे परीक्षायें?" वीरन्ना ने घमंड से पूछा।

"उनसे तुम्हें क्या काम? मैं तो परीक्षा उसी की लूँगी, जो मुझ से शादी करने आयेगा।" गौरी ने कहा।

"क्यों नहीं सोचते कि मैं तुमसे शादी करने आया हूँ?"

"अगर तुम परीक्षा में सफल न हुए, तो जिन्दगी भर मेरा नौकर होकर रहना होगा। नहीं तुम परीक्षा के लिए क्यों आते हो?" गौरी ने कहा।

वीरन्ना और भी उबल उठा। "अगर तुम्हारी परीक्षा में न सफल हो सका तो मुझ से कौन ऐसा बड़ा है, जो हो जाये" उसने कहा।

"यह भी सच है। पर मेरी शर्त याद रखना। मैं तुम्हें कोई कठिन काम न दूँगी।" गौरी ने कहा।

"बताओ कौन से काम है?" वीरन्ना ने पूछा।

"पहिला काम बताती हूँ। मेरे साथ आओ" कहकर गौरी, एक कलश और कटोरा लेकर, नदी की ओर निकली। वीरन्ना भी उसके साथ निकला। नदी के रेत में गौरी ने एक गढ़ा खोदने के लिए कहा। वीरन्ना ने आसानी से गढ़ा खोद

दिया। उसमें पानी आया। "यह पानी अच्छा नहीं है। कटोरी से इस पानी को निकालकर इसे खाली कर दो बाद में जो पानी आयेगा उससे मैं अपना कलश भर लूँगी।" गौरी ने कहा।

वीरन्ना, गढ़े का पानी कटोरे से खाली करने लगा। वह पानी निकालता जाता था, पर वह खाली होता न लगता था। वीरन्ना खूब थक गया।

"क्या अभी गढ़ा खाली नहीं हुआ है?" गौरी ने पूछा।

"मैं हार गया" वीरन्ना ने कटोरा दूर फेंक दिया।

"हार गये तुम पहिली परीक्षा में ही सफल न हुए। क्या किया जाय? देखा जाये, तुम और परीक्षाओं में सफल होते हो कि नहीं?" कहती गौरी, वीरन्ना को अपने घर ले गई। गौरी की सहेलियाँ वीरन्ना को देखकर मुँह छुपा छुपाकर हँसी।

गौरी घर में गई। उसने एक परात में आग, एक डब्बा और कुछ साम्राणी दी। "इस साम्राणी को आग में डाल दो और जब धुँआ निकले, तो उसे डब्बे
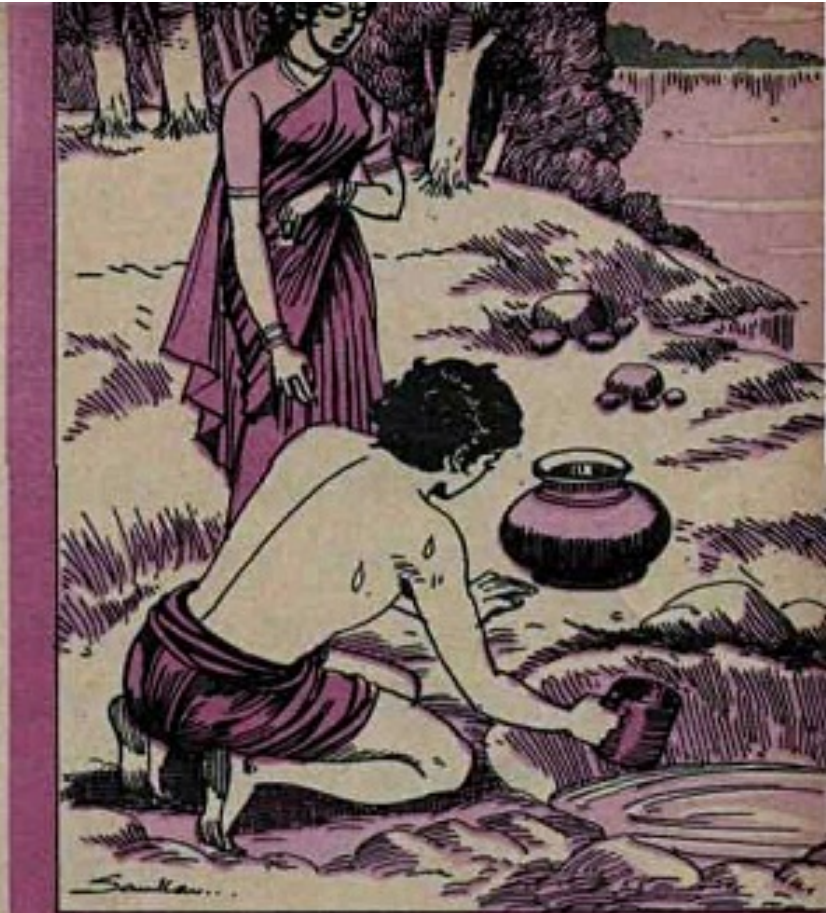
में जब्त कर लेना। मैं अभी जाकर नहाकर आती हूँ। आते ही मैं इस धुँये को अपने सिर के बालों पर लगाऊँगी।"

मन्दमति वीरन्ना ने आग पर साम्राणी रखी और उस पर उसने डब्बा उलट दिया। थोड़ी देर बाद, गौरी गीले बालों से आई। उसने पूछा—"क्या मेरे लिए धुँआ तैयार है?"

वीरन्ना ने कहा—"यह रखा है।" उसने डब्बा ठीक किया। पर उसमें कुछ न था। उसमें से धुँआ कभी का निकल चुका था।

"तुम इतना छोटा काम भी न कर पाये हो, दूसरी बार भी तुम हार गये हो। देखें तीसरा काम ठीक करते हो कि नहीं?" गौरी ने कहा।

इस बार गौरी की सहेलियाँ और जोर से हँसी। वीरन्ना बड़ा शर्मिन्दा हुआ।

गौरी अन्दर गई। एक लोटे में दूध लाई। उसने कहा—"इसमें से आधा पानी निकाल दो और अच्छा दूध अलग कर दो।"

वीरन्ना को न सूझा कि क्या किया जाये। तब वह अपमानित ही नहीं, बड़ा दुखी भी हुआ।

"यह काम मुझ से न हो सकेगा।" वीरन्ना जाने के लिए तैयार हो गया।

"कहाँ जा रहे हो? मेरी सब परीक्षाओं में तुम असफल रहे। अब तुम मेरे नौकर हो। बिना मुझ से कहे, तुम कुछ नहीं कर सकते। जो कुछ मैं कहूँ, वह तुम्हें करना होगा।" गौरी ने कहा।

गौरी की सहेलियाँ, चिढ़ कर उससे तरह तरह की बातें कहने लगीं—"रत्ती भर भी इसे दुनियाबी ज्ञान नहीं है। पर शेखियाँ इतनी मारता है कि कुछ न पूछो। ऊपर से ढ़ेर-सा घमंड़। इतनी अक्ल नहीं है और गौरी से शादी करने की सोच रहा है। मोटा ताज़ा होना काफी नहीं है। कुछ अक्ल भी चाहिए।"

उनकी बातें सुनकर, सब जमा हो गये। देखते देखते, सारा गाँव जान गया कि गौरी ने वीरन्ना की अक्ल ठीक कर दी थी। सब बड़े खुश हुए। सबसे अधिक खुश रामन्ना था चूँकि इसके बाद वीरन्ना बिल्कुल बदल गया था। उसने गौरी के पिता से बात की और गौरी को ही अपना बहू बना लिया।

मणिद्वीप

कुछ व्यापारी एक नौका लेकर पूर्वी द्वीपों में गये। वहाँ व्यापार करके जब वे श्वेत द्वीप में पहुँचे, तो उनकी नाव में सिंहल द्वीप का एक युवक भी सवार हुआ।

नौका समुद्र में ही थी कि जोर से तूफ़ान आया। पतवार टूट गई। तूफ़ान में वे न जान सके कि नौका किधर जा रही थी। एक दिन और एक रात नौका इधर उधर बहती रही। अगले दिन उन्होंने देखा कि एक द्वीप की ओर उनकी नाव जा रही था। थोड़ी देर में नौका उससे टकराकर चूर चूर हो जाती। किसी को आशा न रही कि कोई जीवित रह सकेगा।

इतने में नाविकों के सरदार ने कहा—"यह जो सामने द्वीप दिखाई दे रहा है, वह मणिद्वीप है। यहाँ के पत्थरों में जो मणियाँ हैं, अगर उनके लिए सारी दुनियाँ भी छान डाली जाये तो भी वे न मिलेंगे।"

सब में कुछ हौसला आया। सिंहल द्वीप के युवक ने कहा—"अरे, नाव को अगर टूटना ही हो तो वह पत्थरों से टकराता है, या मणियों से, इसमें क्या फर्क पड़ता है?"

परन्तु नौका मणिद्वीप से अभी एक मील दूर ही थी कि हवा थम गई। नौका को तट पर ले जाने का कोई रास्ता न था। तट पर कोई बन्दरगाह न था। इसलिए कुछ छोटी नौकायें उतारी गईं, उनमें सवार होकर लोग मणिद्वीप की ओर निकल पड़े।

सिंहल का युवक नौका से न उतरा—"रत्नों को तुम ही रखो। मुझे अपने

सुरेन्द्र भटनागर

ताम्रमणी नगर जाना है। यह नौका जरूर मुझे मेरे नगर पहुँचा देगी। मैं इस पर से नहीं उतरूँगा।" सब उसे छोड़कर छोटी नौकाओं में बैठ गये।

तट पर पहुँचते ही नाविकों के सरदार ने इस प्रकार कहा :

"इस द्वीप में बौने रहते हैं। जब उनको गुस्सा आता है, तो उनसे कोई खराब नहीं है। जहरीले बाण छोड़कर वे मार देते हैं। अगर उनके साथ अच्छा व्यवहार किया गया, तो वे अपने प्राण तक दे देंगे। इसलिए उनके साथ अच्छी तरह व्यवहार करना आवश्यक है। वह जो सामने पहाड़ दिखाई दे रहा है, उसके पत्थरों में रत्न ही रत्न हैं। उसके नीचे ही बौनों का नगर है। पहाड़ चारों ओर सीधा-सा है। उस पर चढ़ना असम्भव है। उस पर जाने के लिए सीढ़ियाँ हैं। उन सीढ़ियों तक पहुँचने के लिए बौनों के नगर से जाना पड़ेगा। उन सीढ़ियों पर बौने दिन रात पहरा देते रहते हैं। इसलिए बौनों से मैत्री किये बगैर हम कुछ नहीं कर सकते।"

नाविकों के सरदार के यह कहते ही, सब पहाड़ की ओर निकले। कुछ दूर जाने के बाद, उन्हें नगर दिखाई दिया। वे अभी नगर से कुछ दूर थे कि उन पर बाण बरसने लगे। सौभाग्यवश वे बाण किसी पर नहीं लगे।

"सब यहीं बैठ जाओ। नहीं तो वे लोग समझेंगे कि हम उन पर धावा बोलने जा रहे हैं।" नाविकों के सरदार ने कहा। सब औंधे गिर पड़े।

थोड़ी दूर में कुछ बौने सिपाही, हथियार हाथ में लेकर, नगर के बाहर आये। सैनिकों के सरदार ने पूछा—"कौन

हो तुम? इस द्वीप में तुम क्यों आये हो?"

"हमारी नौका समुद्र में टकरा गयी। हम तुम्हारी मदद के लिए आये हैं।" नाविकों के सरदार ने कहा।

"हम तुम्हारी आँखों पर पट्टी बाँधकर अपने राजा के सामने ले जायेंगे। जो कुछ तुम्हें कहना है, तुम उनसे कहना" बौने सिपाहियों ने कहा। सब इस के लिए मान गये। बौने सिपाहियों ने उनकी आँखों पर पट्टियाँ बाँध दीं। उनके हाथ बाँधकर वे उन्हें नगर में ले गये और उनको राजा के सामने उपस्थित किया।

"जिस तूफ़ान के बारे में तुम कह रहे हो, हम उसके बारे में कुछ नहीं जानते। तुम जिस दिशा से आ रहे हो, हमारे लोग कह रहे हैं कि उनको उस दिशा में कोई नौका नहीं दिखाई दी। शायद तुम जानते ही हो कि जो कोई इस द्वीप में कदम रखता है, वह फिर वापिस नहीं जाता। तुम किसी दुरुद्देश्य से ही यहाँ आये हो, यह बिना किसी सन्देह के कहा जा सकता है। हम तुम्हें फिलहाल कैद में रख रहे हैं।" राजा ने कहा।
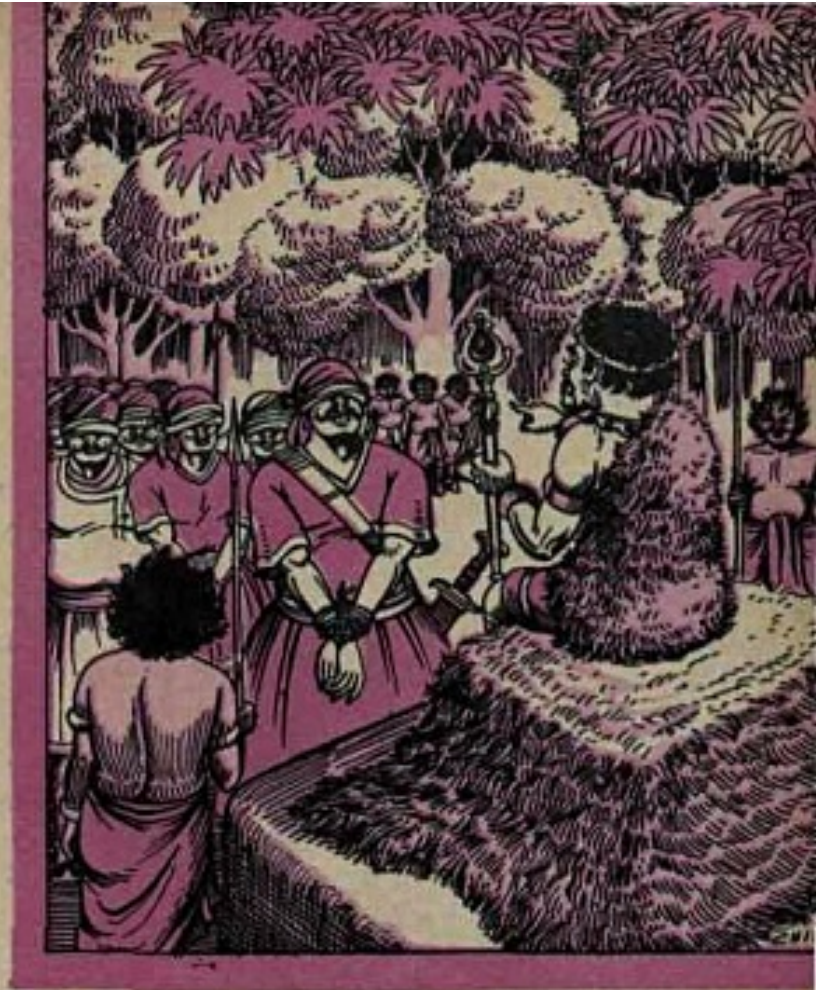
सिपाहियों ने उनको अपनी कैद में डाल दिया। चूँकि वे बौनों के लिए बनाई गई थीं, इसलिए वे व्यापारियों को और नाविकों को बहुत तंग लगीं।

यह सच था कि बौनों को व्यापारियों की नौका नहीं दिखाई दी थी। चूँकि द्वीप के चारों ओर समुद्र में एक धारा थी, उस धारा में पड़कर नौका द्वीप के परली ओर जा लगी। वहाँ एक अच्छा बन्दरगाह भी था। उस बन्दरगाह में आकर नौका तट पर आ लगी। जब और तट पर चले गये तो सिंहल का युवक आराम से सो

गया था। जब उसने आँखें खोलीं तो नौका बन्दरगाह में थी।

"क्या ताम्रमणी आ गई है?" कहता सिंहल युवक नौका से उतरा। बन्दरगाह में कोई न था। पास ही एक पहाड़ था। वह उसके पास जाने लगा। जब वह कुछ दूर गया, तो उसने दो बौनों को गोली खेलते देखा। शाम की धूप में वे गोलियाँ चम चमा रही थीं। उनकी चमक देखकर सिंहल युवक चकित हो उठा।

सिंहली को देखते ही बौनों ने कहा—"बाप रे बाप, यह तो कोई राक्षस है।" वे भागने लगे। पर उसने उनको पकड़कर कहा—"मैं भी तुम जैसा हूँ। पर थोड़ा-सा ऊँचा हूँ और मोटा हूँ। मुझे बड़ी भूख लग रही है। पहिले मुझे खाने को कुछ दो।"

बौने अपनी गोलियाँ लेकर सिंहली को अपने घर ले गये। रास्ते में उन्होंने कहा—"तुम जैसे कुछ राक्षसों को हमारे राजा ने कैद में डाल रखा है।"

"शायद वे ही लोग हैं, जो नौका में मेरे साथ आये थे। जैसे भी हो, उनको छुड़वाना होगा।" सिंहली युवक ने सोचा।

बौने उसे अपने घर ले गये। वह अकेला था, इसलिए सैनिक तो उसे लेने नहीं आये, पर और लोग बहुत-से जमा हो गये। उससे उन्होंने पूछ तलब भी की। उस "राक्षस" ने कोई मणि वगैरह न ली थी। वे गोलियाँ भी, जिनसे बौनों के बच्चे खेल रहे थे, उन्हीं के पास थीं। इसलिए सब ने उसके प्रति स्नेह दर्शाया। उसे पेट भर खाना दिया। उसने गाना सुनाकर, कहानियाँ सुनाकर बौनों को आनन्दित किया।

अगले दिन सवेरे सिंहली युवक ने अपने मित्र बौनों के लड़कों से कहा—"मैं तुम्हारे राजा को एक बार देखना चाहता हूँ।"

"तो चलो अभी चलें, राजा बाग में घूम रहे होंगे।" उन्होंने कहा।

दोनों को अपने कन्धों पर बिठाकर सिंहली युवक राजा के बाग में गया।

"वह देखो, जो पत्थर पर बैठे हैं, वे ही हमारे राजा हैं। हमें उतार दो। अगर राजा ने हमको देखा, तो हमें सज़ा देंगे।" बौनों के लड़के घबराये।

सिंहली युवक ने उनको उतार दिया। राजा के पास गया। उसकी कमर पर पकड़कर उसने उठाया। राजा चीखा। उसका चीखना सुनकर, जहरीले बाण लिए सैनिक चारों ओर से भागे भागे आये।

"अगर उन्होंने मेरा कुछ बिगाड़ा तो, मैं तुम्हें चूर चूर कर दूँगा। पहिले उन्हें दूर जाने के लिए कहो।" सिंहली युवक ने राजा से कहा। राजा ने सैनिकों से दूर जाने के लिए कहा।

"सुनता हूँ, तुमने मेरे साथियों को जेल में डलवा दिया है....उन्हें पहिले छुड़वाओ। उन्होंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? अगर तुमने तुरत उनको न छुड़वाया, तो मैं इस द्वीप का किसी और को राजा बना दूँगा।" सिंहली युवक ने कहा।

"जैसा तुम कहोगे, वैसा करूँगा। पहिले मुझे उतारो तो।" राजा ने कहा। सिंहली युवक ने राजा को नीचे उतार दिया।

राजा ने अपने सैनिकों को बुलवाया, व्यापारियों को कैद से छुड़वाकर लाने के लिए कहा। कुछ ही देर में नौका के सब लोग वहाँ आये।

"इन्होंने झूट कहा है। इन लोगों ने कहा कि तूफ़ान आया था। कहा कि उनकी नौका इस तरह टकरा गई थी कि समुद्र से आ न सकती थी। इसलिए मुझे उन पर सन्देह हुआ, और मैंने उनको कैद में डाल दिया।" राजा ने सिंहली युवक से कहा।

"इसमें झूट कुछ भी नहीं है। हमारी नौका का पतवार टूट गया है और वह बन्दरगाह में है। जब तक नयी पतवार नहीं बना लेते, तब तक हमें यहाँ रहने दो। फिर हम अपने रास्ते चले जायेंगे।" सिंहल के युवक ने कहा। राजा इसके लिए मान गया।

एक दिन में नौका के लिए नई पतवार बना ली गई।

"चलो अब हम चलें...." सिंहली युवक ने कहा।

"बिना मणियाँ लिये कैसे चलें?" दूसरों ने कहा।

सिंहली ने अपने मित्र बौनों के लड़कों को बुलाकर कहा—"हम भी गोली खेलना चाहते हैं। तुम अपने साथियों को साथ लेकर, पहाड़ पर जाओ और बड़ी बड़ी गोलियोंवाले पत्थर उठा लाओ। हमारे लिए छोटी छोटी गोलियाँ काफी न होंगी। बड़ी ही लाना। हम उनमें से गोलियाँ गढ़ लेंगे।

शाम होते होते, दस बारह बौनों के लड़कों ने बड़ी बड़ी मणियाँ लाकर सिंहली युवक के सामने रखीं। सिंहली ने उन्हें फिर अपने साथियों में बाँट दीं। फिर वे नौका पर सवार होकर अपनी यात्रा पर निकल पड़े।

पति-पत्नी की सूझबूझ

एक जंगल के पास पार्वती नाम की स्त्री अकेली रहा करती थी। उसके कोई बन्धु सम्बन्धी न थे। उसका विवाह भी न हुआ था। परन्तु पार्वती ने कुछ गौ भैंसें जमा कर लीं। दूध बेचकर पैसे जमा कर लिये।

जंगल में एक जंगली परिवार रहा करता था। उनका सम्मिलित कुटुंब था। कुल मिलाकर उनमें तीस चालीस लोग थे। वे जंगल में कुछ धान पैदा कर लिया करते और उससे अपना निर्वाह करते। एक दिन उस परिवार के मुखिया ने आकर पार्वती से कहा—"पार्वती, पार्वती, क्या बीस रुपये उधार दे सकोगी? एक साल में मय सूद के मैं दे दूँगा।"

पार्वती ने बीस रुपये उधार दे दिये। एक साल बीत गया। दूसरा साल भी आधा बीत गया। मुखिया ने रुपये तो दिये ही नहीं, पर वह उस तरफ फटका भी नहीं। इसलिए एक दिन फुरसत निकालकर वह जंगल में उस परिवार के पास गयी। जब वह पहुँची तो वे पास ही फसल काट रहे थे। उनमें मुखिया की तरह पाँच छः लोग थे। पार्वती उसको उनमें न पहिचान सकी, जिसने उससे उधार लिया था। उनके देखने से पहिले ही वह घर की ओर वापिस चल पड़ी।

रास्ते में उसे पोतू दिखाई दिया। उसने उसे देखकर पूछा—"कहाँ से आ रही हो? क्या काम था?"

पोतू न जंगल में रहता था, न गाँव में ही। वह इधर उधर घूम घामकर अपना पेट भरा करता। सब उसको बड़ा अक़्लमन्द

श्याम सुन्दर

समझा करते थे। पार्वती ने अपना मन हल्का करने के लिए उसे सब कुछ बता दिया।

पोतू ने कहा—"हाँ, वे सब जंगली, एक से ही लगते हैं। अगर तुमने मेरा कहा माना, तुम्हारा काम हो जायेगा। आज जो फसल काट रहे हैं, कल वे उसे कूटेंगे। तब तुम जाकर कहना—"कुछ भी हो, बड़ा बड़ा ही है। उसका बल औरों में कहाँ से आयेगा?"

पार्वती अगले दिन फिर जंगली परिवार के पास गई। वे धान के गट्ठर बनाकर उसे पत्थरों पर पीट रहे थे और औरतें धान छान रही थीं।

पार्वती ने कुछ देर देखकर कहा—"कुछ भी हो बड़ा बड़ा ही है, औरों में उसका बल कहाँ से आयेगा?"

तुरत मुखिया ने हाथ का गट्ठर नीचे फेंक दिया और एक छलाँग में पार्वती के पास आकर उसने कहा—"अरे अब क्या देखती हो पार्वती....जवानी में मैं यह सारा अकेला कर देता था।"

"पर....तुम यह फुर्ती उधार चुकाने में क्यों नहीं दिखाते हो? मुझ से जो उधार

लिया था, उसे तुमने अभी तक नहीं दिया।" पार्वती ने कहा।

मुखिया अपने आदमियों के सामने बड़ा शर्मिन्दा हुआ। उसने कहा—"पार्वती, मैं किन किन बातों के लिए दौड़ धूप करूँ? पैसा तैयार है। जब कभी मैं तुम्हारे घर जाने की सोचता, तो कोई और काम आ पड़ता।" कहकर वह घर में गया और उसने तीस रुपये लाकर पार्वती को दे दिये।

पार्वती वे रुपये लेकर, खुशी खुशी घर की ओर निकली। पोतू उसे फिर रास्ते में दिखाई दिया। पार्वती ने उसको सारी बात बताई और उसने जो तरीका बताया था, उसकी भी उसने तारीफ़ की।

"तरीकों के क्या कहना? मेरा सारा दिमाग उनसे भरा पड़ा है। एक और बात बताऊँ? तुम्हारे घर के रास्ते में एक पोखर है। उसमें कीचड़ है। अगर तुम उसे पार करके गई, तो खेतों में लोगों को काम करते देखोगी। तुम घर जाकर अपने पैसे रख देना, फिर खेतों में काम करनेवालों के पास जाकर कहना कि तुम्हारा पैसा उस गढ़े में गिर पड़ा है। यह भी कहना कि अगर उन्होंने उस पैसे को निकाल दिया, तो आधा उन्हें दे देगी? वे पोखर में से सारा कीचड़ निकाल देंगे। उनमें से जितनी मछलियाँ तुम चाहो उतनी ले लेना और आराम से घर चले जाना।" पोतू ने कहा।

पार्वती ने वैसा ही किया। खेतों में काम करनेवाले आकर, पोखर में से कीचड़ निकालकर बाहर डालने लगे। उसमें से मछलियाँ छाँटकर, उन्हें लेकर पार्वती ने कहा—"मैं यहाँ खड़ी नहीं रह सकती, मुझे घर में बड़ा काम है। अगर पैसों

की पोटली मिले तो आधा अपने पास रख लेना और आधा लाकर मुझे दे देना।" यह कह वह घर चला गई।

इसके दो दिन बाद, पोतू ने एक आदमी द्वारा पार्वती के पास कहला भेजा कि वह उससे विवाह करना चाहता था। पार्वती भी चाहती थी कि अगर उसको सूझ बूझवाला पति मिल गया, तो हल्का वल्का काम करके वह घर में ही बैठ सकेगी और आराम से वह भरण पोषण भी करेगा। वह उससे विवाह करने के लिए मान गई।

दोनों का विवाह हुआ। पोतू की जिन्दगी अब और भी मज़े में कट रही थी। पार्वती पति को नहीं सताती थी, उसका सारा समय घर के कामों में ही लग जाता। उसके पास चार दुधारू गायें थीं। जंगल में उनको अच्छी हरी घास भी मिल जाती थी। वे खूब दूध देती थीं। उस दूध से ढ़ेर-सा मक्खन निकलता था। उसे ले जाकर, पार्वती उसे कस्बा ले जाती और उसे बेचकर, पैसे ले आती।

एक दिन पार्वती ने तीन बड़े बड़े पात्रों में मक्खन रखा और उन्हें रस्सियों से

बाँधकर, अगले दिन बेच आने के लिए तैयार किया।

उस दिन शाम को, जब पार्वती किसी काम पर बाहर गई, तो पोतू का मन मक्खन देख ललचा उठा। उसने पात्रों की रस्सियाँ खोलीं और उनमें से एक में से मक्खन लेकर खाने लगा। खाता जाता था, पर उसका मन न भर रहा था। उसने एक बर्तन खाली कर दिया। दूसरे बर्तन का भी मक्खन वह चट कर गया। फिर उसने खाली बर्तनों में चिकनी मिट्टी भर दी और उन में से मक्खनवाले बर्तन को, सब से ऊपर रखकर, उनको इस तरह बाँध दिया जैसे कुछ जानता ही न हो।

जब पार्वती अगले दिन कस्बे जाने लगी, तो पोतू ने स्वयं उन बर्तनों को उसके सिर पर रखा, जब पार्वती ने कस्बे में जाकर मक्खन की दुकानवाले के सामने पात्र खोले तो केवल ऊपरवाले पात्र में ही मक्खन देखकर वह बड़ी शर्मिन्दा हुई।

भले ही उसका पति बड़ा चलता हुआ हो, पर उसके साथ उसका चालाकी करना उसे बिल्कुल न पसन्द था। कस्बे से वापिस आते समय, नाहर नाम के गड़रिये से उसकी बातचीत शुरु हुई।

नाहर के पास करीब सौ भेड़ बकरियाँ थीं। पर काली भेड़ एक ही थी और नाहर उस पर जान देता था।

"समझलो कि आज से वह काली भेड़ तुम्हारी नहीं है।" पार्वती ने कहा।

"वह क्यों?" नाहर ने कुछ बिगड़कर पूछा।

"आज आधी रात को, उसे कोई उठा ले जायेगा।" पार्वती ने कहा।

"सच?" नाहर ने पूछा।

"इसीलिए ही तो मैं पहिले बता रहा रहा हूँ। देखें तुम कैसे उसको बचाते हो?" यह कहकर पार्वती चली गई। जब पार्वती घर पहुँची, तो पोतू घर में ही था। उसने आहट तो की, पर वह घर के अन्दर न गई। यह देखने के लिए कि वह क्या कर रही थी, पोतू घर से बाहर आया। तब पार्वती घर के आँगन में इस तरह गिर पड़ी, जैसे मर गई हो।

पोतू घबरा गया। जब उसने पास जाकर उसे हिलाया डुलाया, तो वह शव की तरह थी। साँस भी चलती न मालूम होती थी। पोतू उसे उठाकर अन्दर ले गया। उसके मुँह पर पानी छिड़का, पार्वती साँस लेने लगी। कुछ देर बाद उसने आँखें खोलकर काँपती हुई आवाज़ में कहा—"कभी मैं इस बेहोशी की वजह से ही मर जाऊँगी।"

"यह बेहोशी क्या है? कभी तुमने इसके बारे में नहीं बताया? इसका क्या ईलाज़ है?" पोतू ने पूछा।

"जब मैंने पिछली बार काले भेड़ का माँस खाया था, तब यह कम हो गया था।" उसने कहा।

"काली भेड़ कहाँ हैं यहाँ ? नाहर के पास एक है। चाहे कितना भी पैसा दो, वह उसे न देगा ?" पोतू ने कहा।

"तो क्या मेरी जान इसी तरह जायेगी ?" कहती हुई पार्वती ने फिर आँखें मूँद लीं।

रात को, काली भेड़ चुराने का पोतू ने निश्चय किया। पार्वती अगर मर गई तो फिर उसे दर दर भटकना पड़ेगा।

नाहर कुत्ते के साथ, अपनी भेड़ बकरियों के पास पहरे पर बैठा था। पोतू ने आकर सोचा कि कोई पहरा नहीं दे रहा था। अन्धेरे में उसने काली भेड़ के लिए इधर उधर टटोला, आखिर उसने उसे पहिचान लिया। वह उसको पकड़ने के लिए बकरियों के झुण्ड में से जा रहा था कि कहीं से कोई कुत्ता आकर उसकी ओर लपका। वह डरकर झुण्ड से बाहर भागने को ही था कि उसकी पीठ पर जोर से लाठी की चोट लगी।

जैसे तैसे ज़िन्दा बच बचाकर पोतू घर पहुँचा, तो पार्वती तभी खाना खाकर चारपाई पर बैठी थी। उसे देखते ही उसने पूछा—"इतनी रात कहाँ गये थे तुम ? कुछ देर पहिले ही मैं उठी थी, मैंने थोड़ा-सा खाना खा लिया।"

"तो, तुम्हारी बेहोशी क्या हुई ?" पोतू ने पूछा।

"मुझे और बेहोशी ? कहीं सपना तो नहीं देख रहे हो ?" पार्वती ने कहा।

पोतू जान गया कि उसे सबक सिखाने के लिए ही पार्वती ने वैसा किया था। तब से वह बिना इधर उधर की चाल चालाकी किये रहने लगा।

सराय

एक बार पन्नालाल को राजधानी जाना पड़ा। वहाँ से आते हुए जो कुछ उसके पास पैसा था, वह उसने जिस किसी को ज़रूरत में पाया उसे दे दिया। यही नहीं, वह रास्ता भी भटक गया। तूफ़ान आ गया। पन्नालाल एक जगह फिसलकर गिर गया। उसके कपड़े कीचड़ में खराब हो गये। वह एक गाँव में गया। उसे बड़ी भूख लग रही थी। वहाँ उसने एक आदमी से कहा—"क्या यहाँ कहीं कोई खाने का लंगर है ?

"अभी तो नहीं है ! जल्दी ही यहाँ राजा एक सराय बनाने जा रहे हैं। अगर भोजन चाहते हो, तो राजा के लंगर में जाओ, वहाँ रोज अन्नदान होता ही रहता है।" उस आदमी ने कहा।

पन्नालाल ने लंगर का रास्ता मालूम कर लिया, हाथ पैर धोकर वहाँ जाकर बैठ गया, जहाँ गरीबों को भोजन बाँटा जाता था। वहाँ के लोगों से उसने कुछ बातें मालूम कर लीं।

वहाँ के राजा के कोई सन्तान न थी, किसी ने उससे कहा कि सराय, कुँये, तालाब आदि बनवाने से उसके बच्चे होंगे। यह निश्चय करने के कुछ दिन बाद ही, उसके लड़का हुआ। उसे बताया गया कि सराय, कुओं और तालाब बनवाने के लिए दस हज़ार रुपये लगेंगे और तय हुआ कि उसका एक तिहाई हिस्सा किसान दें और बाकी राजा दें। तालाब बनने से किसानों के खेतों को पानी मिलेगा। क्योंकि उन्हें फायदा हो रहा था, इसलिए

उनका पैसा देना उचित ही था। राजा जो रुपया दे रहा था, उसे कल या परसों शिवालय में ले जाकर, उसे भगवान को समर्पित करके, वे यह निर्माण कार्य प्रारम्भ करनेवाले थे। ये बातें सुनते सुनते पन्नालाल ने अपना भोजन समाप्त किया।

भोजन करके जानेवालों के लिए एक रास्ता निश्चित किया गया था। वह राजा के दरबार में जाता था। वहाँ राजा एक आसन पर बैठा करता था। जिनको अन्न मिलता, वे उसके पास जाते "अन्नदाता, सुखी भव....हम आपका उपकार नहीं भूल सकते। परमात्मा आपका भला करें।" उनको यह कहना पड़ता। एक नौकर उनको चवन्नी देता। वे ताम्बूल लेकर चले जाते। सब यही कर रहे थे। पन्नालाल ने भी यही किया।

पन्नालाल जब अपना नाम बताकर चार आने ले रहा था, तो राजा उसका नाम सुनकर चौंका। उसे उसने बुलाया। पूछ ताछ की तो मालूम हुआ कि वह ही प्रसिद्ध परोपकारी पन्नालाल था। उसने पन्नालाल का नाम ही नहीं सुन रखा था, बल्कि वह उससे कुछ कुछ ईर्ष्या भी करता था। उतने प्रख्यात पन्नालाल को नीचा दिखाने के लिए और औरों के सामने अपमानित करने के लिए राजा ने एक चाल सोची।

पन्नालाल ने जब बताया कि उसे क्यों वहाँ खाने की नौबत आयी थी, तो उसने कहा—"देखो पन्नालाल, तुम दूसरों की सहायता करते आये हो। और तुम्हारी आज मैंने सहायता की है। अगर तुम जैसे जबानी कृतज्ञता दर्शायें, तो न मुझे खुशी होगी न तुम्हें ही। इसलिए तुम्हें मेरा कुछ न कुछ प्रत्युपकार करना चाहिए।"
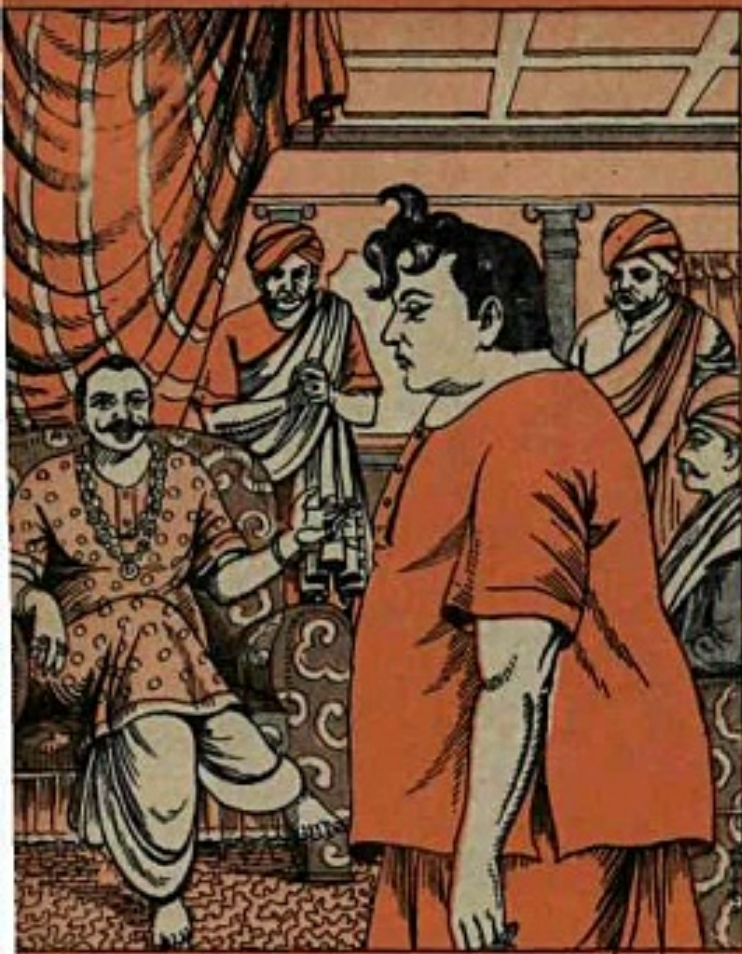
"बताइये....मैं कैसे आपका प्रत्युपकार करूँ?" पन्नालाल ने कहा।

"इस समय सराय के काम के बारे में बड़ा दबाव है। चार दिन के लिए हमें और अधिक नौकर चाहिए। मैं यह नहीं चाहता कि तुम मेरे नौकर बनो। वह ठीक नहीं है, पर यदि तुम स्वयं चार दिन मेरे यहाँ रहे और मेरा काम किया, तो मेरे लिए वह बड़ा प्रत्युपकार है।" राजा ने कहा।

"हुज़ूर....आज आपने मुझे भोजन देकर मेरा उपकार किया है, इसलिए मुझे प्रत्युपकार में, आप अपना सेवक बना लीजिये।" पन्नालाल ने कहा।

राजा ने इधर उधर इस तरह देखा, जैसे कोई मैदान मार लिया हो। पन्नालाल ने जो कुछ कहा था, औरों ने भी सुना। राजा बड़ा खुश था। "अच्छा तो पन्नालाल, तुम चार दिन तक मेरे सेवक का काम करो।"

सच कहा जाये, तो कोई ऐसा काम न था, जो राजा पन्नालाल से करवा सकता था। पर पाँच दस आदमियों के सामने राजा ने उसको कोई काम बताकर भेज दिया। उसका विश्वास था, इस तरह करने से उसकी प्रसिद्धि बढ़ेगी।

राजा के धन को, भगवान को समर्पित करके, सराय की स्थापना करने का मुहूर्त [आ] गया। सौ सौ रुपयों को, पीले कपड़े की पोटलियों में बाँधा और उस तरह की पाँच पाँच पोटलियों को मिलाकर एक बड़ी पोटली बनाई गई। कुल पन्द्रह पोटलियाँ बनाई गईं। उसे पन्द्रह आदमी लेकर और लोग बाग के साथ मन्दिर की ओर निकले। एक पोटली स्वयं राजा उठाकर ला रहे थे। बाकी चौदह आदमियों में पन्नालाल भी था। सब मिलकर जब

संकड़ी पगडंडी से जा रहे थे, तो राजा लड़खड़ाया। उसके हाथ की पोटली फिसल गई और लुढ़क के कीचड़ के गढ़े में गिर गई। तुरत कई ने गढ़े में उतरकर उसे खोजा।

गिरते ही, बड़ी पोटली खुल गई। क्योंकि उसमें रखीं छोटी छोटी पोटलियाँ अलग अलग आदमियों को मिली थीं। फिर मिलीं भी चार। पाँचवी मिलीं ही नहीं।

"सौ ही रुपये तो हैं, घर से और मंगा लिए जायें। सोच लेंगे कि ये सौ रुपये भूदेवी को सौंप दिये हैं। राजा ने अपने घर एक नौकर भेजा और बाकी लोगों के साथ मन्दिर की ओर चल पड़ा। परन्तु पन्नालाल उस गढ़े में बहुत देर तक खोजता रहा। बहुत देर कोशिश करने के बाद, उसे वह सौ रुपये की पोटली मिल गई। तब तक रात हो चुकी थी, इस बीच धन को, भगवान को सौंप दिया गया और धर्मशाला की शिला स्थापना भी कर दी गई।

पन्नालाल राजा के घर गया, स्नान करके, उसने रुपयों को भी धोया। फिर उन्हें ले जाकर राजा के सामने रखकर कहा—"यह लीजिये सौ रुपये की पोटली, जो कीचड़ में गिर गई थी।"
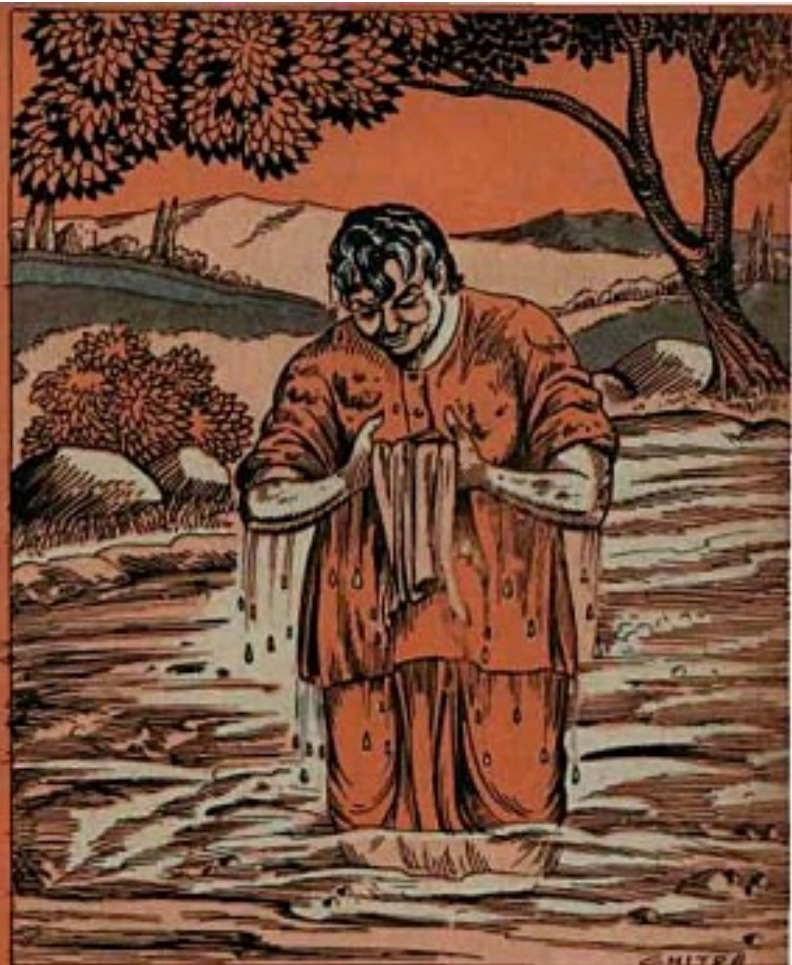
राजा दुविधा में पड़ गया। धर्मशाला के लिए जो रुपया था, वह भगवान पर चढ़ा दिया जा चुका था। अब यह सौ रुपये उस निधि के न थे। यदि उसे वह पन्नालाल से लेता, तो इसका मतलब यह होता कि वह उसे अपने लिए ले रहा था। इसलिए राजा ने कहा—"मैंने तो उसे तभी छोड़ दिया था। इसलिए तुम ही इसे ले लो। तुमने चार दिन सेवा की है। तुम्हारा समय खतम हो गया है। अब तुम कल जा सकते हो।"

पन्नालाल अगले दिन सौ रुपये की पोटली लेकर अपने गाँव की ओर निकल पड़ा। जब वह ज़मीन्दार के घर के पास गया, तो उसे बड़ी प्यास लगी। वह एक किसान के घर गया और उसने उससे पानी माँगा।

"पीओ बेटा, इस पानी से कल हमारा ऋण पूरा हो जायेगा।" किसान ने कहा।

पन्नालाल ने पूछा कि क्या बात थी। राजा जो धर्मशालायें आदि बना रहा था, उसके लिए उसका हिस्सा सौ रुपया था, बहुत कोशिश करने पर भी वह सौ रुपये जमा न कर सका। उसके पास एक छदाम भी न था। जब उसने दो महीने की मोहलत माँगी, तो उसे कहा गया कि उसे रियासत से भेज दिया जायेगा।

पन्नालाल ने वह पीले कपड़े की पोटली जिसमें सौ रुपये थे, उसे देते हुए कहा—"इसे जाकर दे दो। सच कहा जाये, तो यह उन्हीं का रुपया है। परन्तु यह मेरा पैसा है। मैं ही इसे तुम्हें दे दूँगा।"

किसान ने अगले दिन ले जाकर उसे दरबार में दे दिया। जब गन्दे पीले कपड़े में उस धन को कर्मचारियों ने देखा, तो उन्होंने राजा से कहा—"यह तो हमारा ही रुपया जान पड़ता है।" राजा ने किसान से पूछा—"यह तुम्हारे पास कैसे आया?" उससे माल्म हुआ कि उसे पन्नालाल ने दिया था।

पन्नालाल ने जब उसका धन उसे वापिस कर दिया, तो राजा चकित तो हुआ ही, साथ शर्मिन्दा भी हुआ।

कपटी वैद्य

कुम्भी नगर में एक कपटी वैद्य रहा करता था। उसका नाम शिव बैरागी था। वह शेखियाँ मारा करता कि वह एक बड़ा वैद्य था....कई उसकी शेखियों में आ भी जाते, उन्हें बहकाकर अपना पेट भरा करता। उसके पास कुछ भस्म, गोलियाँ और रसायन आदि थे।

उस देश के युवराज को एक अजीब बीमारी हुई। उसे न भूख लगती न प्यास ही। वह बिस्तरे पर पड़ा रहता।

राज वैद्य उसकी बीमारी का निदान न पा सके। युवराज की अस्वस्थता के कारण राजा को बड़ी चिन्ता हुई। उसकी चिन्ता देखकर, मन्त्रियों और राजकर्मचारियों ने सलाह दी कि शिव बैरागी को बुलाया जाय।

"छी....छी....वह भी क्या वैद्य है, जो धन्वन्तरी जैसे राजवैद्य न ठीक कर सके, वह भला वह गँवार दवाई बेचनेवाला क्या ठीक करेगा....?" राजा ने कहा।

"यह नहीं कहा जा सकता महाराज, जो बड़े बड़े वैद्य नहीं कर पाते हैं, वह जंगलों में रहनेवाले जंगली कर दिखाते हैं। कहा जाता है, शिव बैरागी ने कई मरते लोगों को जिलाया है। जो बीमारी राजवैद्य न ठीक कर सके, उसे इस तरह के वैद्य ही ठीक कर सकते हैं।" राजा के कर्मचारियों ने कहा।

राजा ने कुछ देर सोचकर कहा—"तो हम ऐसा करें, कुछ ऐसे लोगों की चिकित्सा के लिए इस शिव बैरागी को बुलायें जिनकी बीमारियाँ औरों से न ठीक

हुई हों। यदि बैरागी उन लोगों की बीमारियाँ ठीक कर दे तो युवराज की भी उससे चिकित्सा करवायेंगे। नहीं तो उस कपटी वैद्य का सिर कटवाकर किले की ड्योढ़ी पर लटकवा दूँगा।"

राजा की यह बात, मन्त्री आदियों को युक्तियुक्त लगी। उन्होंने शहर में घूमघाम कर ऐसे बीमारों को ढूँढ़ निकाला जिनको कुछ ऐसी बीमारियाँ थीं, जो और कोई ठीक न कर पाया था। उन्हें युवराज के कमरे के पासवाले कमरे में रखा। फिर राजा ने शिव बैरागी को बुलाकर कहा—

"सुनते हैं तुम कपटी वैद्य हो। अगर तुम सचमुच वैद्यक नहीं जानते हो, तो तुम्हें दण्ड देना पड़ेगा। क्यों, तुम्हें इस बारे में क्या करना है?"

"महाराज, मैंने कई बीमारों को ठीक किया है। मेरा ईलाज करने का तरीका और दवाइयाँ अलग हैं। जो मुझे नहीं चाहते, वे कहते फिर रहे हैं कि मुझे वैद्यक नहीं आती है। उनका विश्वास करके मुझे दण्ड देना आपके लिए ठीक नहीं है।" शिव बैरागी ने कहा।

"तो तुम यह सिद्ध करो कि तुम वैद्यक जानते हो। अन्दर बहुत-से ऐसे रोगी हैं, जो कई दिनों से बीमार हैं। उन सब की बीमारियाँ ठीक करो। अगर उनको तुमने ठीक कर दिया, तो तुम्हें राज वैद्य बनाऊँगा। अगर उनकी बीमारियाँ ठीक न कर पाये, तो तुम्हारा सिर कटवाकर किले पर लटकवा दूँगा।" राजा ने कहा।

शिव बैरागी के मुख से बात न निकली। सैनिक उसे रोगियों के कमरे में ले गये। कुछ राजकर्मचारी भी उसके साथ थे।

"मुझे रोगियों से एकान्त में कुछ प्रश्न करने हैं, तुम सब चले जाओ।" कहकर

शिव वैरागी ने सब को भेज दिया और अन्दर से किवाड़ बन्द कर लिये। वह न जानता था कि बगल के कमरे में युवराज था।

फिर उस कपटी वैद्य ने उससे कहा—"मेरे पास एक ऐसा राम बाण लेप है कि तुम सब की बीमारियाँ ठीक हो जायेंगी। मनुष्य का दिल निकालकर, भूनकर, पीसकर उसे कुछ औषधियों से मिलाकर तुम्हारा लेप करना होगा। तीन बार उसे लगाते ही, सब बिल्कुल तन्दुरुस्त हो जाओगे। इस औषधी को तैयार करने के लिए जो तुम में सब से अधिक बीमार है, उसे मरने के लिए तैयार होना पड़ेगा।" यह कहकर उसने एक तपदिक के बीमार की ओर देखा।

तपदिक का बीमार घबरा गया। उसने कहा—"मैं बीमार ही कहाँ हूँ। मैं तो बिल्कुल ठीक हूँ। मैं न न करता रहा और हमारे लोग मेरा ईलाज करवाते रहे। मुझे कोई बीमारी नहीं है....कोई बीमारी नहीं है।" कहता वह उठा और बाण की तरह तेज़ दौड़ता बाहर चला गया।

उसके जाते ही, उसके पीछे एक और बीमार सरपट दौड़ा। "मुझे कोई रोग

नहीं है....मैं बिल्कुल ठीक हूँ।" वह भी बाहर चला गया। सब रोगियों को यह कहता देख कि मुझे कोई बीमारी नहीं है, राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। अश्विनी देवता ही अगर आकर चिकित्सा करते तो इन चार पाँच पुराने बीमारों की बीमारियाँ इतनी जल्दी ठीक न होतीं। यह देखने के लिए कि क्या हुआ था, राजा अपने परिवार के साथ उस कमरे में गया। उन्हें खाली कमरे में केवल शिव बैरागी ही दिखाई दिया। पास के कमरे में से राजा ने युवराज का कह कहा सुना।

राजा अपने लड़के को, इतने दिनों बाद, हँसता खुशी देख, उसके पास गया—"क्यों बेटा, तुम्हारी बीमारी ठीक हो गई है? क्यों यूँ हँस रहे हो?"

"मुझे क्या बीमारी है? मैं तो बिल्कुल ठीक हूँ।" कहता राजकुमार फिर जोर से हँसा। राजा ने उससे जो कुछ हुआ था, उसके बारे में मालूम कर लिया। कपटी वैद्य हथेली में प्राण रखकर सोचने लगा कि उसका सिर कटवा दिया जायेगा।

राजा ने उसकी ओर मुड़कर कहा—"तुम्हें वैद्यक नहीं आती। फिर भी तुम्हें माफ़ कर देता हूँ। तुम अब वैद्यक करना छोड़ दो और हमारे दरबार में विदूषक का काम करो। युवराज ज़रा दुःखी रहते हैं, तुम्हारा यह काम है कि तुम उन्हें कभी दुःखी न होने दो।

शिव बैरागी विदूषक बन गया और उसने युवराज को कोई बीमारी न होने दी।

तभी कहा जाता है कि हास से बड़ी कोई चिकित्सा नहीं है।

उस वर्ष अच्छी वर्षा हुई। पशु स्वस्थ थे। फसल भी अच्छी हुई। घास पेड़ें, बेलें भी खूब बड़ी हुईं। दूध वगैरह भी गोकुलवालों को पहिले से कहीं अधिक मिला।

शरत आया। नन्दगोप आदि ने आपस में सलाह मशवरा करके इन्द्रोत्सव मनाने का निश्चय किया।

निश्चय करना ही था कि तुरत उसके लिए तैयारियाँ भी शुरु हो गईं। सब इसी काम में लग गये।

कृष्ण ने यह सब देख गोपकों से पूछा—"क्या है यह? क्यों यूँ तुम सब जोश में हो? क्या उत्सव है यह? किस देवता की पूजा करने जा रहे हो? उससे तुम्हें क्या लाभ है?"

गोपकों में अति वृद्ध ने कृष्ण से कहा—"लोकपालकों का राजा इन्द्र है न! वही तो वर्षा ऋतु लाता है। जो गौवों का इतना कल्याण करता है, गोपकों के लिए वह अवश्य पूज्य है। इसलिए ही हम जोर शोर से इन्द्रोत्सव मनाने जा रहे हैं।"

यह सुन कृष्ण ने कहा—"हम मनुष्यों की तीन ही वृत्तियाँ हैं। वे है कृषि, व्यापार और पशु पोषण। जो जो

८. गिरि पूजा

अच्छा है। यदि तुमने मेरा कहा न सुना, तो मैं तुमसे यह जबर्दस्ती करवाऊँगा।"

जब कृष्ण ने इस प्रकार बहुत देर तक समझाया, तो दूसरे भी मान गये। यही नहीं, उन्होंने यह भी बताया कि वे सर्वथा कृष्ण पर ही निर्भर थे। वह ही उनका शरण्य था। क्योंकि उसने अनगिनित चमत्कार किये थे। यही नहीं, उसने कई बार आपत्तियों से भी उन्हें बचाया था। उनके लिए वह मनुष्य नहीं देवता था।
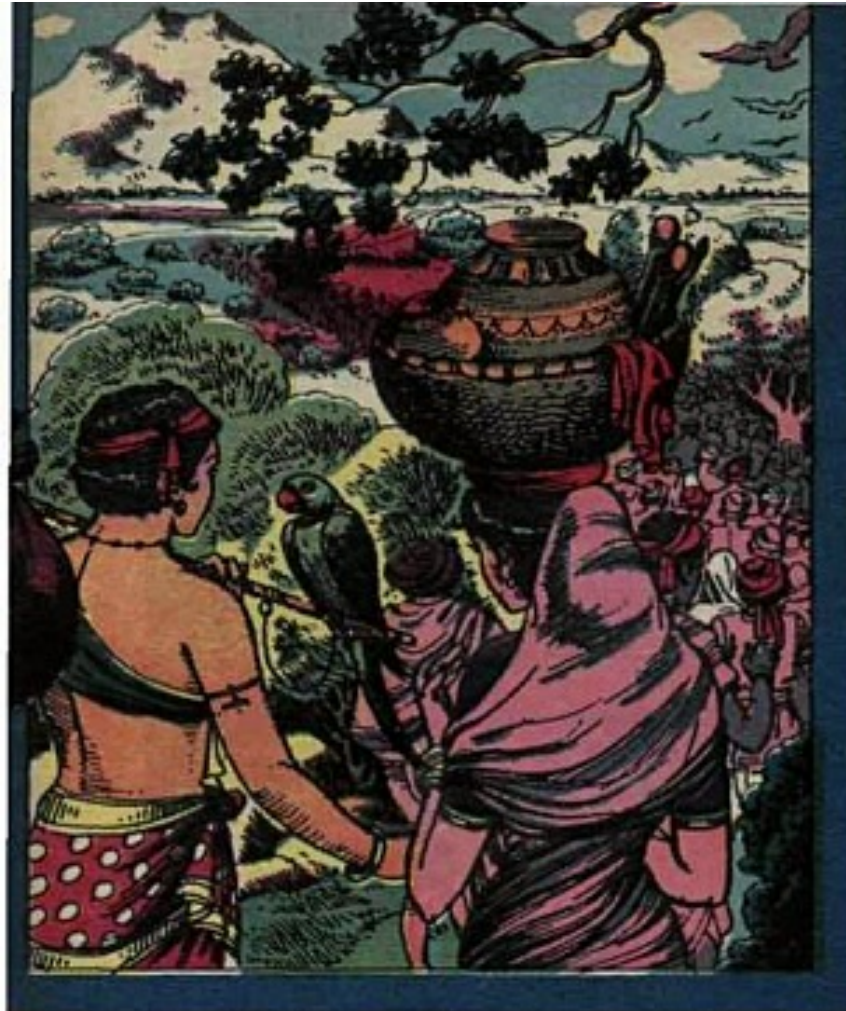
वृत्ति करता है, वह ही उसका देवता है। हम गोपालक हैं, जंगलों में रहते हैं। पहाड़ों में घूमते हैं। पशुओं को पालकर जीवन निर्वाह करते हैं। इसलिए हमारे लिए वन, पर्वत और पशु देवता हैं। जिस जिसका जो जो कुलदेवता है, उसी की पूजा की जानी चाहिए। कर्षक गाँवों में रहते हैं। जंगली जंगलों में रहते हैं। हम पहाड़ों में रहते हैं। ब्राह्मण मन्त्रयज्ञ करते हैं। कर्षक हल यज्ञ करते हैं। गोपालक पर्वत यज्ञ करते हैं। इसलिए हमारे लिए पर्वतोत्सव मनाना अधिक

गोपालकों ने इन्द्रोत्सव का ईराद़ा छोड़ दिया। ब्राह्मण पुरोहितों को बुलाकर उन्होंने पर्वत यज्ञ की व्यवस्था करवाई।

खीर आदि, पकवान तैयार किये गये। तरह तरह के अन्न, माँस, मधु, आचार, दही, घी और दूध आदि सुविधानुसार बहंगियाँ और गाड़ियों पर चढ़ाया गया।

बड़े बूढ़े, स्त्री, बच्चे जवान अधेड़ गोपक सब मिलकर गोवर्धन पर्वत की यात्रा करने लगे।

गोवर्धन के पास एक अच्छी जगह को गोबर से लीपा गया। उसे अलंकृत किया गया और कृष्ण की देखरेख में वहाँ गिरिपूजा हुई।

वे जो खाद्यपदार्थ लाये थे उन्हें पहाड़ पर उन्होंने चढ़ाया। गोपालकों ने पहाड़ को पुष्प अर्पित करके नमस्कार किया।

जब सब पूजा में मन थे, तो कृष्ण स्वयं पर्वताधिदेवता के रूप में पर्वत के शिखर पर प्रत्यक्ष हुआ। सब आश्चर्य से देख रहे थे कि एक हाथ से सारा नैवेद्य बटोर कर वह खा गया। फिर उसने कहा—"मैं तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट हूँ। मुझे प्रसन्नता है।"

"मैं ही पर्वत रूप में हूँ। इसलिए तुम मेरी ही आराधना करो। ऐसा करने से तुम्हारी सब इच्छायें पूरी होंगी। तुम्हारी गौवों की वृद्धि होगी। वे अमृत देंगी। मैं कामरूप में तुम लोगों के साथ ही रहता रहूँगा।" यह कहकर पर्वत के शिखर का देवता अदृश्य हो गया।

गोपालकों ने पर्वत के शिखर के कृष्ण को और पर्वत के नीचे के कृष्ण को एक ही समय देखकर हाथ जोड़े।
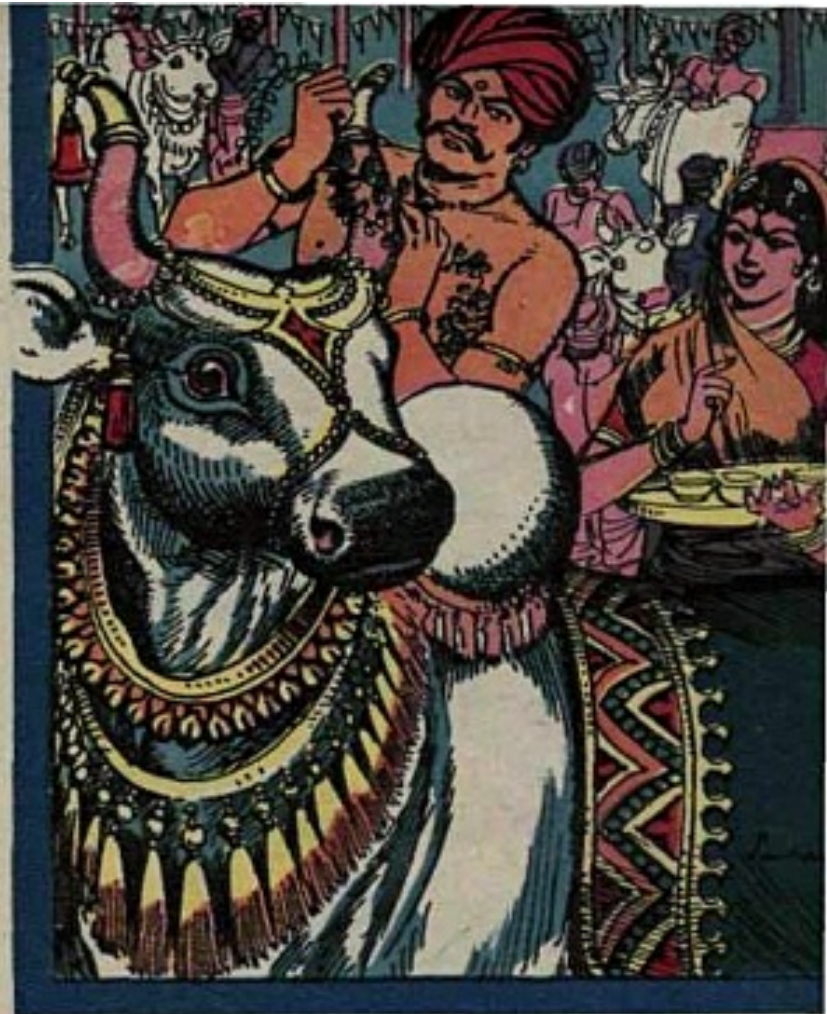
फिर उन्होंने अपने पशुओं के सींगों की पूजा की। उनके गलों पर घंटियाँ बाँधीं। बेलें उनके सिरों पर बाँधीं। कई और तरह के अलंकरण भी किये।

चिल्लाते चिल्लाते उन्होंने पर्वत की परिक्रमा की। फिर उन्होंने ब्राह्मणों का सन्तर्पण किया। जो यज्ञ में शेष रह गया था उसे उन्होंने आपस में बाँट बूँटकर खा पी लिया। उत्सव समाप्त हो
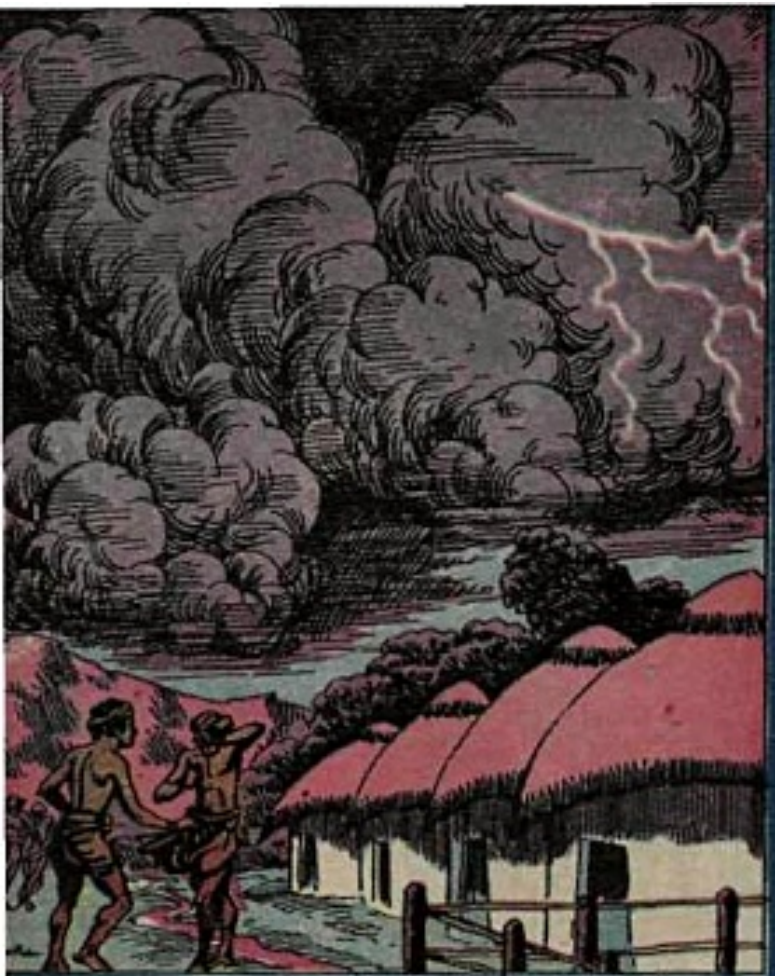
गया। कृष्ण के साथ सब अपने गाँव लौट गये।

उधर स्वर्ग में इन्द्र का बड़ा अपमान-सा हुआ। उसे बड़ा गुस्सा आया। उसने संवर्त आदि महामेघों को बुलाकर कहा—"देखा, बृन्दावन के नन्द आदि गोपकों का इतना सिर चढ़ गया है कि मेरी वार्षिक पूजा छोड़कर, कपटी कृष्ण की बात मानकर उन्होंने एक छोटे मोटे पहाड़ की पूजा की है। मगर मैं यह बात यहाँ नहीं छोड़ूँगा। तुम सात दिन तक लगातार बरसो और उन गौवों को हानि पहुँचाओ जिनके सहारे वे जीते हैं। इस तरह जाकर यदि तुमने गोपकों को हानि पहुँचाई, तो मैं बड़ा खुश होऊँगा। मैं भी तुम्हारे साथ आऊँगा और आकाश से देखूँगा कि तुम कितने प्रतापी हो और क्या करते हो।

गोकुलवालों को ईशान्य दिशामें बिजलियाँ दिखाई दीं। हवा जोर से बहने लगी। गरमी बढ़ गई। दुस्सह हो गई। छोटे बच्चे झुलस-से गये। बड़ों के पैरों में छाले पड़ गये। कृमि भी छटपटाने लगे। वर्षा के सब लक्षण दिखाई देने लगे।

पूर्व में मेघ गरज रहा था। "अरे भाई, यह अकाल वर्षा क्या है?" गोपालक प्रमुखों ने सोचा।

देखते देखते कालमेघ आकाश में संचार करने लगे। उन्होंने सूर्य को ढक लिया। आकाश ढक गया। बिजलियाँ कड़कने लगीं। चमकने लगीं। ओले गिरे। फिर भूमि और आकाश एक से हो गये और लगातार मूसलाधार वर्षा होने लगी।

यह वर्षा देख, गोपक घबरा गये। उन्हें लगा कि प्रलय प्रारम्भ हो गई थी। उन्हें न सूझा कि उस वर्षा से कैसे रक्षा हो। कहाँ भागा जाये। पशुओं की भी बुरी हालत थी। पेड़ गिर गिरा गये थे। कई बिजली गिरने के कारण जल जला गये थे। कई बाढ़ में बह बहा गये थे। कई पक्षी मारे गये थे। इस तूफान के कारण सारा जंगल भयंकर हो उठा था।

मनुष्यों की हालत तो और भी बुरी थी। झोंपड़ियाँ गिर गईं थीं। गाड़ियाँ उलट गईं थीं। पशु नष्ट हो गये थे। खाना वाना नहीं बनाया जा रहा था, न कहीं दूध ही दुहा जा रहा था।

तब गोपकों ने कृष्ण के पास जाकर कहा—"तुम ही हमारे सर्वस्व हो, हमारी रक्षा करो।"

कृष्ण इन्द्रकी ईर्ष्या समझ गया, इन्द्र इस गुस्से में बदला ले रहा है कि जो पूजा उसकी की जानी चाहिए थी, वह किसी और की गई। इन्द्र का विश्वास था कि इस प्रकार करने से कृष्ण निसहाय हो जायेगा।

कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को आकाश में उठाकर, उसके नीचे गोपक और गोपिकाओं की रक्षा करने की सोची।

तुरत उसने गोवर्धन पर्वत को भूमि से उखाड़ा और उसे अपने हाथ में छाते की तरह उठाया। जब उसने उसे ऊपर उठाया, तो बड़े बड़े पत्थर शोर करके नीचे लुढ़के। पेड़ उखड़ गये। गुफाओं के शेर और बिलों के साँप बाहर आ गये। उस पर रहनेवाले विद्याधर भाग गये। तपस्या करनेवाले तपस्वियों की तपस्या भंग हो गई।

कृष्ण ने गोवर्धन को उठाकर कहा---"तुम अब अपने पशुओं को साथ लेकर इसके नीचे चले आओ। वर्षा तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेगी।" उसने गोपकों से कहा। वे भागे भागे गये। अपनी गाड़ियाँ, समान, स्त्री बच्चों और गौवों को लेकर, उस पहाड़ के नीचे आ गये।

सात दिन की वर्षा के बाद इन्द्र मेघों को वापिस ले गया। आकाश साफ हो गया। गोपक पहाड़ के नीचे से बाहर आ गये। कृष्ण ने पर्वत को यथास्थान रख दिया। वह फिर पेड़ की चोटी पर गया और पहाड़ पर चरती गौवों को देखने लगा।

कृष्ण के चमत्कार को देखकर, इन्द्र निश्चिन्त हो, अपने घर न बैठ पाया। वह डर-सा गया। इसलिए वह कुछ देवताओं को साथ लेकर, ऐरावत पर सवार होकर, वज्र लेकर भूलोक में आया। गोवर्धनगिरि पर बैठे कृष्ण के पास आया। कृष्ण को देखकर उसे सर्वव्यापी समझकर वह ऐरावत से उतरा और उसने सिर झुकाकर नमस्कार किया।

कृष्ण यूँ निश्चल बैठा रहा, जैसे उसने इन्द्र को देखा ही न हो। यह देख कि कृष्ण उसके प्रति क्रुद्ध था। इन्द्र, कृष्ण की स्तुति करने लगा। उसने स्वीकार किया कि गोपाल के रूप में सर्वेश्वर को वह पहिचान न सका और उसने दुरभिमान में अतिवृष्टि की। उसने कृष्ण से क्षमा माँगी। फिर उसने कृष्ण का गोपति के रूप में अभिषेक किया। दिव्य आभरण दिये।

अन्त में इन्द्र ने इस प्रकार कहा।

"कंस के नीचे कितने ही और राक्षस तुम्हारी हानि करने की सोच रहे हैं।

वे सब तुम्हारे हाथ मारे जायेंगे। कंस को मारकर तुम राजा बनोगे, तुम्हारी बुआ के युधिष्टिर और भीम के पैदा होने के बाद मेरे कारण अर्जुन पैदा होगा। वह भक्त होकर तुम्हारा आश्रय लेगा। तुम उसका ख्याल करना। उसकी देखभाल करके, उसको कीर्ति देना। आगे कौरव, पाण्डव युद्ध होगा। उसमें तुम उसे विजय दिलाना। यही मेरी इच्छा है।"

कृष्ण ने उत्तर दिया—"मेरी बुआ के पाँचों लड़के बड़े पराक्रमशाली हैं। उनमें देवतांश है। वे सारी भूमि के अधिपति होंगे। उनमें बीच का अर्जुन असाधारण रूप से शूर है। सब मैं पहिले ही जानता हूँ। जो तुमने कहा है, मैं अवश्य करूँगा। अच्छा हुआ कि तुम आये। अब तुम निश्चिन्त हो जा सकते हो।"

इन्द्र ने कृष्ण का साष्टान्ग किया। उसकी प्रदक्षिणा की। ऐरावत पर सवार होकर, देवताओं के साथ अपने लोक चला गया। फिर कृष्ण पहाड़ से उतरकर स्वग्राम चला गया।

उसके आते ही गोपालकों में से प्रमुखों ने उसे घेर लिया। वे अब अच्छी तरह जान गये कि वह साधारण व्यक्ति न था। उन्होंने उससे कहा—"तुम सच बताओ कि तुम कौन हो और क्यों हम में यूँ छुपे हुए हो? तुम तीनों लोकों की रक्षा कर सकते हो। फिर यहाँ क्यों गौवें चरा रहे हो? तुम्हें देखकर हमें डर लग रहा है।"

कृष्ण ने हँसकर कहा—"मैं तुम लोगों का ही हूँ। फिर ये सब प्रश्न क्यों?" यह सुन सब बड़े खुश हुए।

अरण्य पुराण

[११]

मौवली मनुष्यों द्वारा भगा दिया गया। फिर जंगली जीवन बिताने वापिस चला आया। झुण्ड जहाँ मिलता था, उस पहाड़ की चोटी पर शेरखान का चमड़ा गाड़कर उसने कहा कि वह झुण्ड के साथ शिकार नहीं करेगा। केवल अपने चार भेड़िये भाइयों के साथ ही शिकार करेगा।

उसने भेड़ियानी और भेड़िये को अपने अनुभव समझाने की कोशिश की। शेरखान का चमड़ा निकालने के लिए उसने जिस चाकू का उपयोग किया था, वह भी दिखाया। अकेला और बड़े भाई ने बताया, कैसे उन्होंने पशुओं को शेरखान पर दौड़ाने में मदद की थी। इन खबरों को सुनने भालू पहाड़ पार से आया। मौवली के कारनामे सुनकर बघेल की खुशी का ठिकाना न रहा।

सूर्योदय कभी का हो चुका था। पर कोई सोने की नहीं सोच रहा था। एक ओर खबरें चल रही थीं और दूसरी ओर पहाड़ पर से आती शेर के चमड़े की गन्ध सूँघकर भेड़ियानी खुश हो रही थी।

मौवली ने कहा—"अगर अकेला और बड़ा भाई मेरी मदद न करते, तो मैं कुछ भी न कर पाता।"

भेड़िये ने अंगड़ाई लेते हुए कहा—"खैर, अब हमारा लड़का हमें वापिस मिल गया है। यही काफी है। उसने कितना तजुर्बा पा लिया है। मैं उसके

"हम पाँच जो हैं।" बड़े भाई ने कहा।

"इस शिकार में शायद हम भी हों।" बघेल ने पूँछ हिलाते हुए भालू को देखते हुए कहा। फिर उसने अकेला की ओर मुड़कर कहा—"अब तुम क्यों मनुष्यों के बारे में सोच रहे हो?"

"क्यों? बताता हूँ, सुनो।" कहते हुए अकेला ने यह बात बताई।

मौवली के शेर के चमड़े को पहाड़ पर गाड़ देने के बाद अकेला गाँव तक गया और जंगली लोग जिस रास्ते का इस्तेमाल करते थे उसे बिगाड़ आया। इतने में चमगादड़ ने पेड़ों के बीच उड़ते हुए आकर कहा—"मनुष्यों का गाँव शहद के छत्ते की तरह भिनभिना रहा है।"

"क्यों, तुमने क्या देखा?" अकेला ने पूछा।

"गाँव के फाटक के पास लाल फूल खिला हुआ है। उसके चारों ओर आदमी बन्दूक लिए बैठे हैं।" चमगादड़ ने कहा।

अकेला ने यह बात बताकर कहा—"आदमी यूँहि शौक के लिए बन्दूक नहीं पकड़ते हैं। यह मैं अच्छी तरह जानता

पैर चाटने लायक भी नहीं हूँ। मनुष्यों की बातों से भला हमें क्या मतलब?"

"हाँ, हमें उनसे क्या मतलब?" भालू और बघेल ने भी कहा।

मौवली ने भेड़ियानी के पेट पर सिर रखकर खुशी से मुस्कराते हुए कहा कि वह मनुष्यों को न देखेगा। न उनकी आवाज सुनेगा। उनसे कोई सम्बन्ध भी न रखेगा।

"अगर भाई, वे तुमसे सम्बन्ध करना चाहें, तो तुम क्या करोगे?" अकेला ने पूछा।

हूँ। देखते रहो। जल्दी ही बन्दूक लेकर आदमी हमारे रास्ते पर आयेंगे। शायद अभी ही आ रहे हों। खबरदार।"

"वह क्यों? उन्होंने ही तो मुझे भगा दिया है! अब उन्हें मुझसे क्या काम है?" मौवली ने गुस्से में कहा।

"भाई, तुम आदमी हो। तुम्हारे लोग क्या करते हैं और क्यों करते हैं यह तुम ही जानो।" अकेला ने कहा।

तुरत मौवली का चाकू चमका और उसे उसने जमीन में भोंका। अकेला के पाँव पर वह लगते लगते बचा।

"अगर फिर तुमने मुझे और मनुष्यों को मिलाकर बातचीत की तो मैं नहीं मानूँगा।" मौवली ने चाकू को रखते हुए कहा।

अकेला ने जहाँ चाकू गड़ा था, उसे देखकर कहा—"लगता है, मनुष्यों के बीच रहकर तुम्हारी नजर कमजोर हो गई है। तुम्हारे चाकू मारने से पहिले मैं हरिण को भी पकड़लूँगा।"

बघेल यकायक उठा। उठकर दूर तक देखा, फिर ऐसे खड़ा हो गया, जैसे काठ मार गया हो। बड़े भाई ने बघेल

की बगल में आकर वैसा ही किया। अकेला पचास गज दूर भागा और वह भी जकड़-सा गया। उनमें जो सूँघने की शक्ति थी, मौवली में न थी। यद्यपि यह शक्ति उसमें मामूली आदमियों से अधिक थी, तो भी उनमें रहने के कारण वह भी मन्द हो गई थी।

"आदमी...." अकेला ने सामने के पैरों पर लेटते हुए कहा।

"बलदेव, हमारा पीछा करता आ रहा है। वह देखो, उसकी बन्दूक की चमक।" मौवली ने बैठते हुए कहा।

"आदमी आयेंगे यह पहिले ही मैं जानता था।" अकेला ने कहा।

मौवली के चारों भाई पेटों के बल रेंगते पहाड़ के नीचे चले गये और पौधों के पीछे छुप छुपा गये।

"तुम कहाँ जा रहे हो?" मौवली चिल्लाया।

"दुपहर होते होते हम उनकी खबर लेकर चले आयेंगे।" बड़े भाई ने कहा।

"वापिस आ जाओ....आदमी आदमी को नहीं खायेगा।" मौवली ने कहा।

"इससे पहिले मुझे मनुष्य कहने से चाकू से मारना जो चाहते थे।" अकेला ने कहा।

भाई झिझकते झिझकते वापिस चले आये।

"क्या जो कुछ मैं करता हूँ। उस सब के लिए मुझे कैफियत देनी होगी?" मौवली ने खिझकर कहा।

"यह है आदमी! यह है आदमी की बात? उदयपुर के पिंजड़ों के पास भी आदमी इसी तरह बातें किया करते थे।" बघेल मन ही मन गुनगुनाया, पर उसने बाहर कहा—"इस बार यह ठीक ही कह रहा है। मनुष्य झुण्ड में शिकार करते हैं। बाकी और क्या करेंगे, यह बिना जाने एक को मार देना अनाड़ीपन होगा। यह आदमी क्या चाहता है, पहिले यह पता लगाओ।"

"हम नहीं आयेंगे। तुम अकेले ही शिकार करो। अब तक उसकी खोपड़ी भी ले आते।" बड़े भाई ने कहा।

(अभी है)

६५. मार्तण्ड मन्दिर

यह प्राचीन सूर्य मन्दिर काश्मीर घाटी के पास एक पठार पर है। कहा जाता है, १२०० साल पहिले यह मन्दिर बना। इसके शिल्प में ग्रीक प्रभाव दिखाई देता है। यह इस्लामाबाद (अनन्तनाग) से कुछ ही दूर है। इस मन्दिर के टूट फूट जाने का क्या कारण है, नहीं मालूम है।

Photo by P. V. Subramanyam
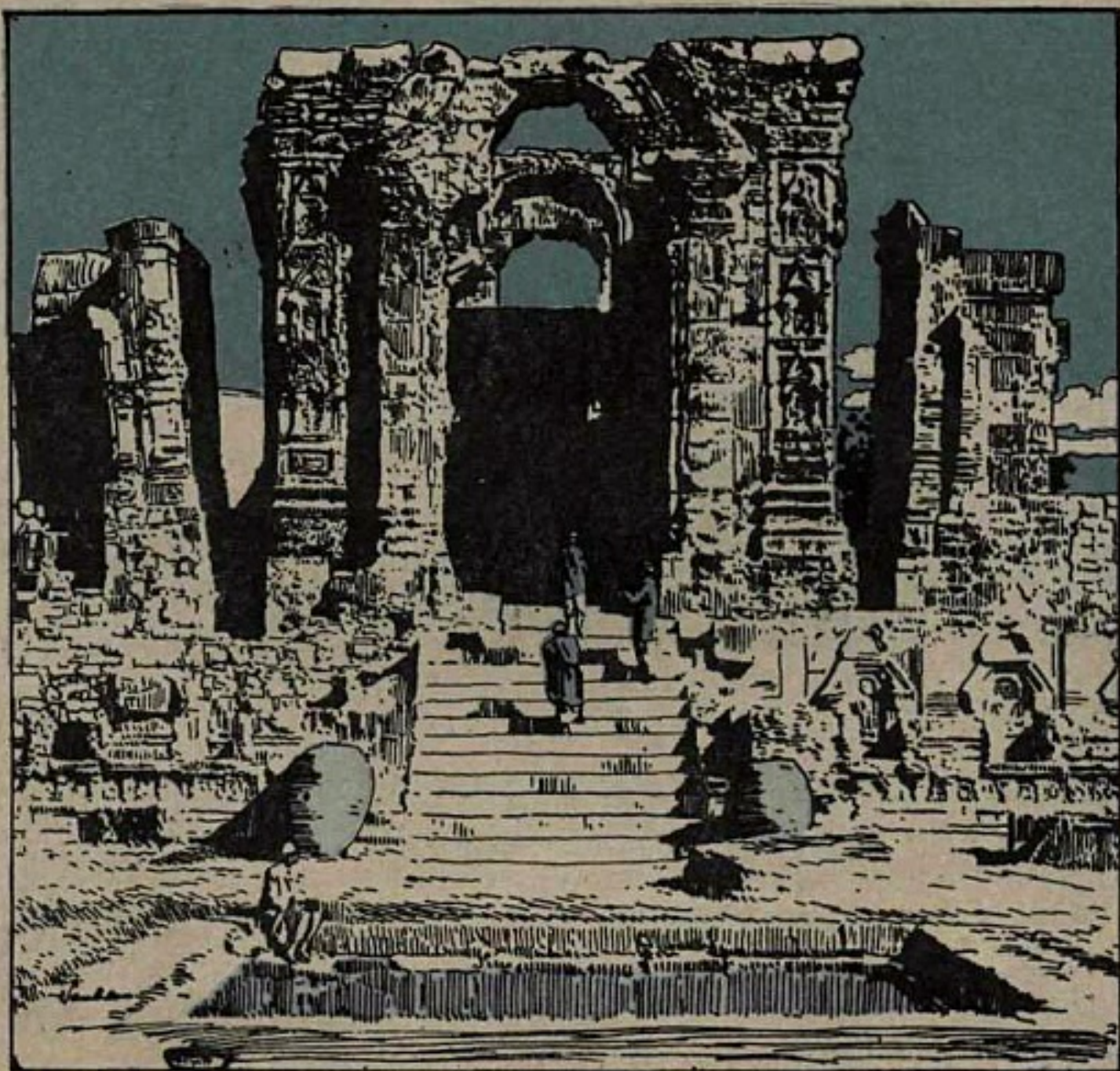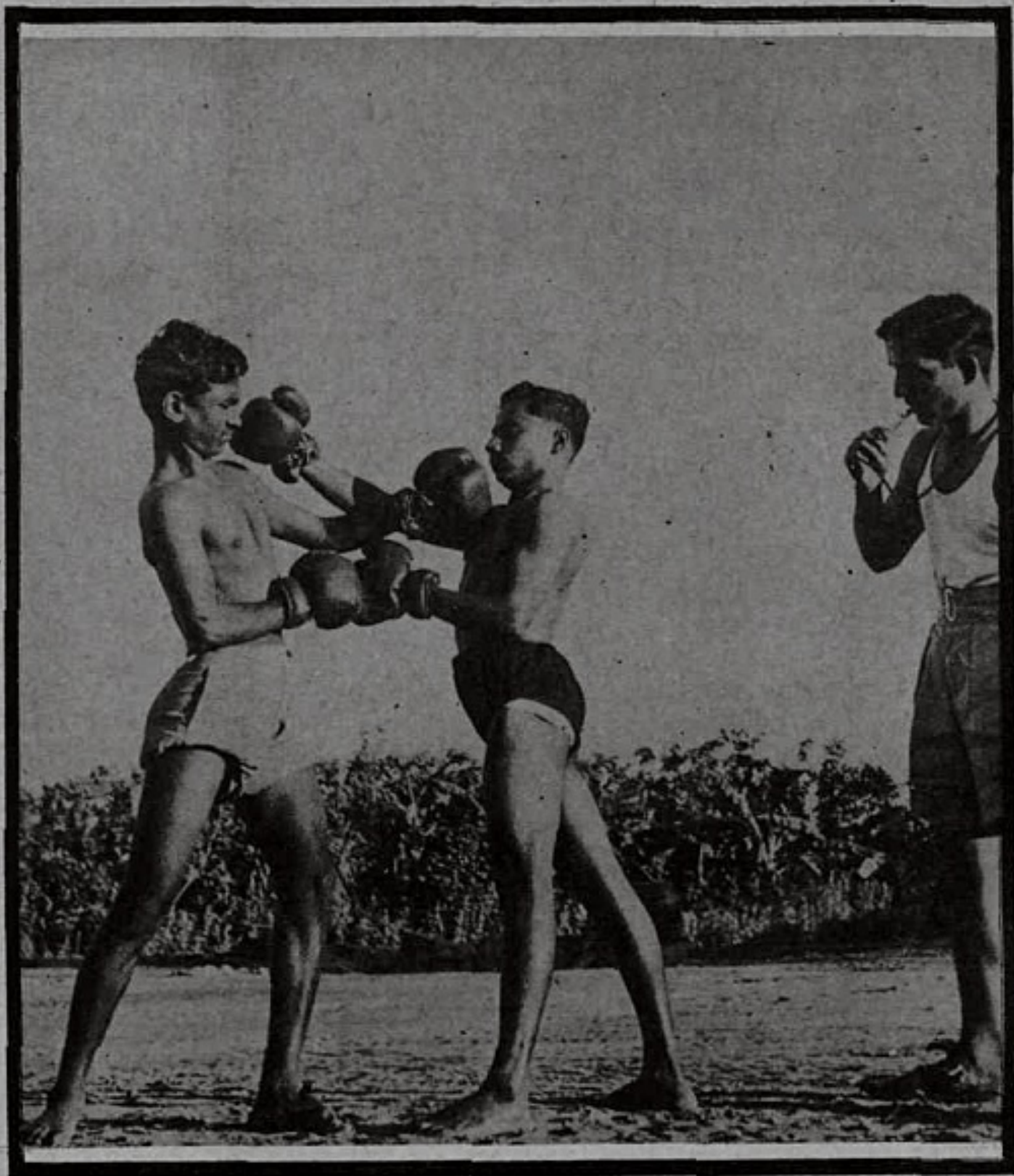
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

मित्र से कभी हम मार न खायें!

प्रेषक:
हीरालाल ठठेरा - जोधपुर

Photo by Madan Gopal

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

शत्रु से कभी हम हार न खायें !!

प्रेषक :
हीरालाल ठठेरा - जोधपुर

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई १९६७ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ मई १९६७ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

मई – प्रतियोगिता – फल

मई के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **मित्र से कभी हम मार न खायें!**

दूसरा फ़ोटो: **शत्रु से कभी हम हार न खायें!!**

प्रेषक: **हीरालाल ठठेरा,**

C/o श्री चौथमलजी ठठेरा, ठठेरों की गली, करला बाजार, जोधपुर (राजस्थान)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'